भारतमाता के वरद पुत्र, अमर सेनानी नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने समय-समय पर अपने परिवारजनों, मित्रों, राष्ट्रचिंतकों एवं राजनीतिक प्रतिद्वन्द्वियों के नाम अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर पत्र लिखे हैं। व्यापक पत्राचार किया है। ऐसे पत्र उनके त्याग, राष्ट्र प्रेम, मनोबल और बौद्धिक उत्कृष्टता के ज्वलन्त परिचायक हैं, क्रांतिकारी लेखक श्री शंकर सुल्तान पुरी द्वारा संकलित तथा सम्पादित।

नेताजी सुभाष के विशेष पत्र

शंकर सुल्तानपुरी

नवयुग प्रकाशन, दिल्ली-७

नेताजी सुभाष के विशेष पत्र

C

नेताजी सुभाष के विशेष पत्र

मां !

क्या इस युग में दुखी भारतमाता की एक भी संतान स्वार्थ-रहित नहीं है ?

कहाँ है वह प्राचीन युग ? वह आर्य वीर कहाँ हैं जो भारत-माता के लिए अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर सकें ?

मां का जीवन स्वार्थमय नहीं होता, संतान और देश के लिए होता है। यदि आप भारत का इतिहास पढ़ें तो देखेंगी कि कितनी ही माताओं ने भारत की सेवा में जीवन उत्सर्ग कर दिया। हम मां के स्तन-पान करके बड़े होते हैं, इसलिए मां के उपदेश और शिक्षा जितना प्रभाव डाल सकते हैं, उतना अन्य बातें नहीं।

[मां प्रभावती को लिखे गए एक पत्र से]

यह पत्र-यात्रा : एक अमूल्य धरोहर

महापुरुषों की गौरवशाली परम्परा में सुभाष बाबू का अपना विशिष्ट स्थान है। वे इस परम्परा के महत्त्वपूर्ण नक्षत्रों में एक हैं। *यद्यपि राजनीतिक दृष्टि से अभी तक सुभाष का यथोचित मूल्यांकन नहीं हो पाया है, जो वास्तव में अब तक हो जाना चाहिए।*

यह कहना अत्युक्ति न होगी कि सुभाष के सहयोगियों, अनुयायियों, भक्तों और समर्थकों ने भी सुभाष के मूल्यांकन की दिशा में उस उत्साह और प्रयास का परिचय नहीं दिया है, जिसकी आशा स्वाभाविक रूप से की जानी चाहिए।

२३ अगस्त, १९४५ को सुभाष के दुर्घटनाग्रस्त होने के मर्मान्तक समाचार के बाद भारतीय राजनीतिज्ञ स्वतन्त्रता-प्राप्ति और पद-प्रतिष्ठा में ऐसे व्यस्त और लिप्त हुए कि शनैः-शनैः सुभाष हमारे लिए कहानी बनते चले गए। हां-हां, कभी-कभी जनता ने जैसे चौंककर उन्हें याद किया। कुछ खलबली मची। अखबारों में तीखी प्रतिक्रिया हुई। कुछ दिन 'जाँच आयोग' का बाजार गर्म *रहा। ले-देकर नेताजी के गुम होने की बात 'गुम' होकर रह गई।*

एक समय था, 'नेताजी' सुभाष का पर्याय था। आज व्यंग्य और कटाक्ष के रूप में प्रयुक्त होता है। खद्दरधारी कोई भी छल-

जलूल टटपूंजिया 'नेताजी' के नाम से संबोधित होकर गर्व या अपमान की अनुभूति कर लेता है। हमारे मंत्रिगण, विधायक और संसद्-सदस्य भी उसी गौरव से मंडित होते हैं—नहीं कह सकता कि कब उनका नेतापन गौरवान्वित होता है और किस स्थिति में असम्मानित !

मगर क्या अब भी देश में नेता हैं ? यदि है तो बहुत खूब ! नही हैं तो क्यो ?

जो कुछ भी हो, इस देश में महात्मा गांधी के आदर्शों को जिस तरह किराये में लाई गई दरी की भांति ओढा-बिछाया गया है, ठीक उसी प्रकार 'नेताजी' की स्थिति भी हुई है। बेचारे देशसेवियों ने नेतृत्व की आड में इतने-इतने तमाशे किए कि व्यंग्य और तिरस्कार के रूप में 'नेताजी' की संज्ञा से विभूषित किए गए।

परन्तु यह कोई अचरज का विषय नही है। कम-से-कम आज इन्दिरा गांधी के समाजवादी युग में बहुत-सी परिभाषाएं बदल गई हैं—गांधीवाद और नेतृत्व की परिभाषा बदल जाना, ऐसा खेदपूर्ण और विस्मयजनक नहीं है।

किन्तु नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के जीवन की परिस्थितियों पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि वे अवसर और सामयिक प्रोत्साहन पाकर नेता नहीं बने, बल्कि वे नेतृत्व की प्रतिभा लेकर जन्मे थे जिसे देश-काल की परिस्थितियों ने गहरा रंग दिया और जो आजीवन उनके व्यक्तित्व का अंग बनी रही।

प्रस्तुत पुस्तक नेताजी की गौरवशाली जीवन-यात्रा का संक्षिप्त पत्रात्मक पक्ष है। यह पक्ष उनके अन्तरंग-बहिरंग को समझने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है।

हमारी जो भावनाएं मौखिक रूप से नहीं प्रकट हो पातीं, जिन्हें हम वक्तव्यों, टिप्पणियों, भाषणों और लेखों में भी अभि-

व्यक्त नहीं कर पाते थे प्रायः व्यक्ति-विशेष को लिखे गए पत्रों में व्यक्त हो जाती हैं।

हमारे समय-समय पर लिखे गए पत्र हमारी मनोभावनाओं, विचारों, धारणाओं, आस्थाओं, विश्वासों, मान्यताओं, मनःस्थितियों, सामयिक मानदण्डोंऔर हमारी अन्तर्-प्रवृत्तियों के बिम्ब होते हैं।

सुभाष के पत्रों में भी हमें इन सभी प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं और इनके आधार पर सुभाष का जो व्यक्तित्व निर्मित होता है वह विशुद्ध वैज्ञानिक और यथार्थवादी कहा जा सकता है।

सुभाष केवल नेता ही नहीं थे, सर्वप्रथम एक बालक थे; किन्तु आज के उच्चवर्गीय परिवार के आमोद-प्रमोदप्रिय, लापरवाह नहीं, बल्कि एक विलक्षण बालक।

यदि विलक्षण न होते तो उनकी बाल-लेखनी से ऐसे सारगर्भित शब्द कैसे लिखे जाते—"मां, बताओ तो हमारी इस शिक्षा का उद्देश्य क्या है? मेरे लिए इतना धन व्यय कर रही हो?...मैं सोचता हूँ कि मेरे लिए तुम इतना कष्ट क्यों उठाती हो?...मां, क्या जज, मजिस्ट्रेट, बैरिस्टर अथवा किसी शासकीय पद पर मेरे नियुक्त हो जाने से आपको सर्वाधिक प्रसन्नता होगी?"

उपर्युक्त शब्दावली 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' का परिचय देती है। यहीं से आभास होने लगता है कि यह बालक साधारण नहीं है, इसे उच्च पदाधिकारी बनकर वैभव-विलास का जीवन व्यतीत करने की चाहना नहीं है।

यही नहीं, उसमें भक्ति, धर्म और दर्शन की भी गहराई है। कितनी भावपूर्ण अभिव्यक्ति है—"दक्षिण में स्वच्छ जल से परिपूर्ण पवित्र गोदावरी दोनों किनारों का स्पर्श करती है, कल-कल ध्वनि के साथ सागर की ओर निरन्तर भागी जा रही है। कैसी विचित्र है! यह स्मरण करते ही रामायण की पंचवटी याद आती

है। तब याद आते हैं, राम, लक्ष्मण और सीता ने समस्त राज्य और सम्पदाओं को त्यागकर स्वर्गिक सुख की अनुभूति करते हुए गोदावरी के तट पर समय व्यतीत कर रहे हैं।

यह बात नहीं कि ये भावनाएं शाब्दिक भावुकतामात्र हों। नहीं, यह सब अन्त:करण की प्रेरणा है। उसके 'नेता-निर्माण' की पोषक हैं। वह नौकरी नहीं करेगा। वह शिक्षा का अच्छा उद्देश्य स्थिर करना चाहता है। उसे ज्ञान और भक्ति में रस मिलता है।

यही ज्ञान-पिपासा उसे सत्य की खोज में जंगलों, पर्वतों की ओर ले जाती है। वह स्वामी विवेकानन्द का आराधक हो जाता है।

उसके संस्कार उसके पत्रों में जहां-तहां बिखरे पड़े हैं जो सिद्ध करते हैं कि सुभाष का ओजपूर्ण निर्माण राजनीतिज्ञ घटनाचक्र के अधीन नहीं, वरन् सांस्कारिक धरातल पर होता चला गया था।

उन्होंने जननी जन्मभूमि की सेवा करने का व्रत एक दिन में किसी युवा भावुकता में बहकर नहीं लिया था, वरन् वह व्रत आन्तरिक प्रेरणा का सुनिश्चित प्रतिफल था।

आई०सी०एस०-पद से त्यागपत्र देते समय सुभाष ने देशबन्धु चित्तरंजन दास को जो पत्र लिखा था, वह उनके राष्ट्र-प्रेम, देशभक्ति, निर्भीकता एवं सेवा-भावना का एक ज्वलन्त उदाहरण है।

लिखते हैं—"मैं सिविल सर्विस से त्यागपत्र देने को पूर्णत: कटिबद्ध हूँ। यदि ऐसा सम्भव हो गया तो मैं अपना समय निरर्थक चिन्तन में नहीं नष्ट करूंगा वरन् नौकरी छोड़ते ही तुरन्त राष्ट्र-सेवा के कार्य में लग जाऊंगा।"

राष्ट्र-सेवा के क्षेत्र में भी सुभाष अन्ध-अनुगामी नहीं थे। इस क्षेत्र में उनके चरित्र, व्यक्तित्व और नेतृत्व ने सम्पूर्ण देश को प्रभावित किया।

वे कभी दबे नहीं, अन्धानुकरण नहीं किया। उन्होंने महात्मा

गांधी-जैसे सर्वप्रिय नेता को स्पष्ट शब्दों में लिखा—"आप जानते हैं कि मैं आपका अन्धानुकरण नहीं करता।"

सुभाष जितने भावुक, तरल, सहृदय और उदार थे उतने ही सिद्धान्तप्रिय, गंभीर, निर्भीक और स्वाभिमानी भी।

राजनीतिक क्षितिज पर फिलहाल सुभाष के समकक्ष कोई दूसरा नाम उभरकर नहीं आता जो प्रारम्भ से महापुरुषत्व के सारे तत्त्व समेटकर चला हो। सुभाष की पत्र-यात्रा विस्तृत, व्यापक और विविधतापूर्ण है।

उनके पारिवारिक और सामाजिक पत्र मां, पिता, भाई, भाभी मित्र आदि को सम्बोधित करके लिखे गए हैं जिनमें साधारण घरेलू बातों से लेकर धर्म, दर्शन और राष्ट्र-धर्म की गम्भीर समस्याओं की अभिव्यक्ति है।

सुभाष के पारिवारिक पत्रों में उनके चरित्र, विचार और राष्ट्र-प्रेम की गहरी झलक मिलती है।

जहां तक सुभाष के राजनीतिक पत्रों का सम्बन्ध है, निश्चय ही वे पत्र स्वतंत्रता-संग्राम के इतिहास के महत्त्वपूर्ण संदर्भ हैं। उनका गांधी, नेहरू और जिन्ना के साथ किया गया पत्राचार, कांग्रेस की तत्कालीन स्थिति पर बहुत बड़ी रोशनी डालता है।

'नेताजी के विशेष पत्र' का आशय केवल कुछ उन असाधारण (हमारी दृष्टि में) पत्रों की प्रस्तुति है जो बालक सुभाष से लेकर 'नेताजी सुभाषचन्द्र बोस' बनने की यात्रा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

यों तो सुभाष के पत्रों की संख्या हजारों में है। उन सभी का संकलन और एकत्र प्रस्तुतीकरण सहज सम्भव नहीं।

नेताजी की पत्र-यात्रा का यह लघु संदर्भ भी अपने-आपमें व्यापक और व्यक्तित्व निर्माणक है।

ये पत्र हमारी अमूल्य धरोहर हैं जो वर्तमान के नेताओं और

भावी नेताओं को सच्चा नेता निभाने की दिशा में सात्विक प्रेरणा प्रदान करती है।

यह अमूल्य धरोहर सुभाष की है परन्तु इसके गुपचुप धरी रहने में सुभाष की आत्मा को शांति न होगी।

सुभाष की आत्मा की शांति तो इसी में निहित है कि उनकी धरोहर उनकी भावी पीढ़ी को सफल नेतृत्व प्रदान करने में सहायक हो।

आइए, देखें, यह पत्र-यात्रा कितनी भावपूर्ण, सरस, ओजमयी और पावन है!

यात्रा शुरू होती है, मां के नाम लिखे गए कुछ भावपूर्ण पत्रों से।

जनता-जनार्दन के नाम अमर, ओजस्वी स्वर

'मैं अपने देशवासियों से कहता हूं, मत भूलो कि गुलाम रहने से बड़ा और कोई अभिशाप मनुष्य के लिये नहीं है। मत भूलें कि अन्याय उत्पीड़न से समझौता करना सबसे बड़ा पाप है। सनातन नियम याद रखो—यदि तुम जीवन प्राप्त करना चाहते हो तो उसका उत्सर्ग करो। यह भी याद रखो कि अन्याय के विरुद्ध लड़ना सबसे बड़ा गुण है फिर चाहे उसके लिए जो भी मूल्य चुकाना पड़े।

मैं आत्म-त्याग के आदर्श को लेकर ही अपने जीवन को प्रारम्भ करना चाहता हूं···। मेरा यह विश्वास और भी दृढ़ होता जा रहा है कि भविष्य में आत्म-त्याग के किसी भी आह्वान को मैं साहस और धैर्य के साथ स्वीकार करूंगा···। जो सत्य समझूंगा उसको पालन करने के मार्ग में मुझे सांसारिक विवेचन के अधीन नहीं रहना पड़ेगा···।

न्याय, समानता, स्वाधीनता और नियमशीलता का प्रेम से घना सम्बन्ध है। यदि मानव-जाति के प्रति हमारे हृदय में प्रेम नहीं है तो हम किसी के साथ न्याय और समानता का व्यवहार नही कर सकते। ऐसी दशा में न तो हम स्वतंत्रता के लिए लड़ ही सकते हैं और न आत्म-बलिदान ही कर सकते हैं। मैं कह सकता हूं कि यही सिद्धान्त साम्यवाद के सार हैं और इसी साम्यवाद को मैं देखना चाहता हूं।

[सुभाष चन्द्र बोस]

भारत राष्ट्र : एक जीवित आत्मा

मनुष्य जीवन में जिस प्रकार शैशव, यौवन, प्रौढ़ावस्था और वार्द्धक्य आते है, राष्ट्रीय जीवन में भी उसी प्रकार उसी क्रम से ये अवस्थायें देखने को मिलती हैं। मनुष्य मरता है और मृत्यु के बाद नया कलेवर धारण करता है। राष्ट्र भी मरता है और मरण के भीतर से ही नवजीवन प्राप्त करता है, फिर भी व्यक्ति और राष्ट्र में अन्तर है कि सब राष्ट्र मृत्यु के बाद जीवन नहीं पाते। जिस राष्ट्र में अस्तित्व की कोई सार्थकता नहीं रह जाती, जिस राष्ट्र की हृदय-गति बिल्कुल स्तब्ध हो जाती है, वही पृथ्वी-तल से विलुप्त हो जाता है, अथवा कीट-पतंग की भांति जीवन धारण करता रहता है और इतिहास के पृष्ठों से बाहर उसके अस्तित्व का कोई निदर्शन नहीं रह जाता।

भारतीय राष्ट्र एक से अधिक बार मरा है, किन्तु मृत्यु के बाद पुनः जीवित भी हुआ है। इसका कारण यह है कि भारत के अस्तित्व की सार्थकता थी और अब भी है। भारत का एक सन्देश है जिसे ... कोने-कोने तक पहुंचाना है। भारत की संस्कृति में ऐसा है, जो विश्व-मानव के लिए बहुत आवश्यक है और जिसे ग्रहण

किए बिना विश्व-सभ्यता वास्तविक उन्मेष नहीं पा सकती। केवल यही नहीं, विज्ञान, कला, साहित्य, व्यवसाय-वाणिज्य इन सब दिशाओं में भी हमारा राष्ट्र विश्व को कुछ देगा और सिखायेगा। इसीलिए भारत के मनीषियों ने अन्धकारपूर्ण युगों में भी अपलक भारत का ज्ञानप्रदीप जलाए रखा। हम उन्हीं की सन्तान हैं। अपना राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त किए बिना हम मर सकते हैं।

मनुष्य-देह पंच भूत में मिल जाने पर भी जीवात्मा कभी नहीं मरती। उसी प्रकार एक राष्ट्र के मर जाने पर भी उसकी शिक्षा-दीक्षा तथा सभ्यता की क्रमिक धारा ही उसकी आत्मा होती है। जब कभी किसी राष्ट्र की निर्माण-शक्ति समाप्त हो जाय, तो समझना चाहिए कि वह मरणोन्मुख है। आहार, निद्रा और सन्तान-उत्पत्ति ही तब उसकी कार्य-सूची बन जाती है और लोक-लीक चलन ही एकमात्र नीति है। इस दशा में कोई-कोई राष्ट्र बचा रहता है, यदि उसके अस्तित्व की सार्थकता रही तो।

जब कभी अन्धकारपूर्ण युग किसी राष्ट्र को ग्रस लेता है तो वह किसी प्रकार अपनी शिक्षा-दीक्षा और सभ्यता की रक्षा करता रहता है, अन्य राष्ट्रों में विलीन होकर निश्शेष नहीं हो जाता। उसके बाद अदृष्ट अथवा भगवान के इंगित से फिर उसे नवजागरण की झलक मिलती है। अंधकार धीरे-धीरे मिटने लगता है, नींद टूटती है, आंखें खुलती हैं और उनकी निर्माणशक्ति पुनः लौट आती है। सहस्र दल पदुम की भांति उस राष्ट्र का जीवन-धर्म फिर प्रकट होता है और वह अपने-आपको नई-नई दिशाओं में अभिव्यक्ति देने लगता है। भारत राष्ट्र इसी प्रकार अनेक मृत्यु और जागरण के अन्तराव-लम्बन से गतिशील है, कारण उसका एक मिशन रहा है—भारतीय सभ्यता का एक उद्देश्य है जो आज भी सफल नहीं हुआ है।

भारत के इस मिशन में जिसकी आस्था है वह भारतवासी ही मात्र जीवित है न कि वे तैंतीस कोटि लोग जो केवल जिन्दा रहने

के लिए जिन्दा हैं। भारत के और बंगाल के युवकों का यह विश्वास है, तभी वे जीवित हैं।

[सुभाष चन्द्र बोस]

आत्म-विश्वास

जब मुझे महीनों-महीनों भारत के बाहर जेलखानों में रहना पड़ा तो उन दिनों अक्सर मेरे मन में यह प्रश्न उठता—किसके लिए किसकी प्रेरणा से हम जेल की यातनाएं सहकर भी टूटे नहीं बल्कि और अधिक शक्तिशाली हो उठे हैं ? भीतर से इस प्रश्न का जो उत्तर मिलता उसका आशय है—'भारत का एक मिशन है, एक गौरवपूर्ण भविष्य है, भारत के उस भविष्य के उत्तराधिकारी हम हैं। नये भारत के मुक्ति के इतिहास की रचना हम ही कर रहे हैं और हम ही करेंगे। यह आस्था है तभी सब दुःख सह सकता हूं, भविष्य के अंधेरों को अस्वीकार कर सकता हूं, यथार्थ के निष्ठुर सत्यों को आदर्श के कठोराघातों से धूल में मिला सकता हूं।' यही वह अटल, अचल आस्था है, जो देश की युवाशक्ति को मृत्युंजयी बनाए है।

यह श्रद्धा, यह आत्म-विश्वास जिसमें है, वही व्यक्ति सृष्टा है, वही देश-सेवा का अधिकारी है। संसार में जो कुछ भी महत् प्रचेष्टा वह मानव-मन, आत्म विश्वास और निर्माण-शक्ति की प्रतिछाया-मात्र है। अपने और अपने राष्ट्र के ऊपर जिसे भरोसा नहीं है वह व्यक्ति कभी कोई निर्माण कर सकता है भला ?

[सुभाष चन्द्र बोस]

"मां ! एक बार आंख खोलकर देखो कि आपकी संतान की क्या दशा हो गई है ?

पाप से, ताप से, अन्न के अभाव से वे नरक की अग्नि मे निशिदिन जल रहे हैं। उस पवित्र सनातन धर्म की क्या दशा हो गई है ! वह पवित्र धर्म अब लुप्त होने वाला है।"

[मां प्रभावती के नाम]

⊙

"मां के प्रति हमारे हृदय में अटूट श्रद्धा है।...मा के अतिरिक्त अन्य कोई मां के समान पूज्य नहीं। हमारा इतिहास गवाही है कि विपत्ति-काल मे सदा हमने मां का आह्वान किया है..."

[देशबन्धु की पत्नी श्रीमती वासन्ती देवी के नाम]

⊙

नेताजी की यह पत्र-यात्रा उनके बालकाल्य से आरम्भ होती है। पूज्यनीया माता के नाम लिखे गए उनके सहस्रो पत्रो मे जिस भाव-भाषा, विचार-धारणा और मन:स्थिति की अभिव्यक्ति हुई है, वह उनकी अवस्था के सामान्य बालक मे दुर्लभ है।

आज तेरह-चौदह वर्ष का बालक शुद्ध रूप में साधारण-सा पत्र भी नही लिख पाता जबकि सुभाष इस अवस्था मे ज्ञान, धर्म, शिक्षा और दर्शन-सम्बन्धी विशद् व्याख्याए करने लगे थे।

इसे उनकी विलक्षण प्रतिभा ही कहा जा सकता है।

सुभाष को अपनी माता के प्रति अपार श्रद्धा थी। धार्मिक संस्कार उन्हें माता से मिले थे। विचारों की तरलता और भाव-जगत् की गहराई और गाम्भीर्य उसी सांस्कारिक प्रभाद का प्रति-

फल था।

यह पहला पत्र है सन् १६१२ का। अवस्था थी लगभग १५ वर्ष। मां से अलग कटक में रहकर शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।

नवमी के अवसर पर बाल सुभाष का सुकोमल हृदय देवी-पूजन को ललक उठा किन्तु उसमें सम्मिलित न हो सके।

इस पत्र में देवी के प्रति श्रद्धा, भक्ति और प्रेम की जो अभिव्यक्ति हुई है, वह सामान्य बालक की लेखनी से कदाचित् सम्भव नहीं।

लिखते हैं—

कटक,
शनिवार, सन् १६१२

परम पूज्यनीया श्रीमती माता ठकुरानी,

श्री चरण कमलेषु!

मां, आज नवमी है। इस समय आप देश में देवी की पूजा में संलग्न होंगी। इस बार पूजा सम्भवतः धूम-धाम से सम्पन्न होगी!

परन्तु मां, धूम-धाम से क्या प्रयोजन? जिनकी हम पूजा करते हैं उन्हें तो हृदय में स्मरण करना ही पर्याप्त है। जिस पूजा में भक्ति-चन्दन और प्रेम-कुसुम का उपयोग किया जाय, वही पूजा जगत् में सर्वश्रेष्ठ है।

आडम्बर और भक्ति का क्या साथ?

इस बार एक दुःख मन में है। वह दुःख साधारण नहीं, महान् है। देश जाकर त्रैलोक्यवंदिता, सब दुःख हरण करनेवाली महिषासुर-मर्दिनी, जगज्जननी दुर्गा देवी की पूर्ण आभूषणों से अलंकृत दीप्तिमयी मूर्ति के दर्शन करके अपने नेत्रों को सफल नहीं कर सका। पुरोहित के उन पवित्र मंत्रों की ध्वनि, उनके शंख घंटा-सुनकर अपने कर्ण-रन्ध्रों को सार्थक नहीं कर पाया।

कुसुम, चन्दन, धूप आदि की सुगन्ध से नासिका को पवित्र नहीं कर पाया। एक साथ बैठकर देवी का प्रसाद पा रसना को तृप्त भी नहीं कर सका।

इस बार पुरोहित के दिए हुए निर्माल्य को प्राप्त कर स्पर्शेन्द्रिय को सार्थक नहीं कर पाया और शान्ति-जल के अभाव में शान्ति भी न प्राप्त कर सका।

सब कुछ निष्फल ही रहा। यदि देवी की चराचर व्यापी मूर्ति के दर्शन कर सकता तो यह दुःख मिट जाता।

मां, फिर काष्ठपुतली देखने की कामना न होती; किन्तु वह सौभाग्य, उतना आनन्द, क्या मनुष्य को प्राप्त होता? इसी कारण दुःख हुआ।

आपका सेवक
सुभाष

⊙

और इस दूसरे पत्र में ईश्वर-भक्ति की सार्थकता, महत्ता पर गंभीर चिंतन का रंग है। भक्ति की ऐसी पवित्र और निर्मल गूंज योगियों के हृदय में भी न गुंजरित होती होगी।

कटक, गुरुवार

मां,

क्षमा करना, बहुत दिनों से आपको पत्र नहीं लिख सका। नदा दा अब कैसे हैं? क्या इस बार वह परीक्षा नहीं दे सकेंगे? ईश्वर का अनुग्रह कम नहीं है। देखो तो जीवन में हर क्षण उसके अनुग्रह का परिचय मिलता है। वास्तव में तथ्य तो यह है कि हम अन्धे, अविश्वासी और नास्तिक हैं और भगवान की कृपा का महत्त्व नहीं जान पाते। अपने ईश्वर का स्मरण नहीं करते। मैं तो हृदय से पूर्ण निष्ठा से स्मरण करता हूं। परन्तु जैसे ही विपत्ति समाप्त होती है और सुख के दिन आते हैं, हम ईश्वर को स्मरण करना भूल

जाते हैं। इसी कारण कुन्ती ने कहा था—'हे स्वामी, तुम मुझे सदैव विपत्ति में रखना ! तब मैं सच्चे हृदय से तुम्हारा स्मरण करूंगी। सुख-वैभव में तुमको भूल जाऊंगी, इसीलिए मुझे सुख मत देना !'

जन्म-मरण ही जीवन है। इस जीवन में हरि का नाम-स्मरण करना ही जीवन की सार्थकता है। यदि हमने ईश्वर का नाम नहीं स्मरण किया तो जीवन व्यर्थ है। मनुष्य और पशु में यही अन्तर है कि पशु ईश्वर का अस्तित्व नहीं जानता और हम जानकर उसे स्मरण करने में असमर्थ हैं। हम प्रयास करने से ईश्वर को जान सकते हैं। उसे स्मरण कर सकते हैं। ज्ञान असीम है। वह सीमित बुद्धि द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सकता।

इसी कारण भक्ति की आवश्यकता है, मैं तर्क करना नहीं चाहता क्योंकि अज्ञानी हूं। अब मैं केवल यह दृढ़ विश्वास करना चाहता हूं कि ईश्वर का अस्तित्व है। यही मेरी आस्था है। विश्वास से भक्ति उत्पन्न होगी और भक्ति से ज्ञान उपजेगा। महर्षियों ने कहा है—'भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते' भक्ति, ज्ञान के पीछे भागती है। शिक्षा का अर्थ बुद्धि को परिमार्जित करना है और सत्-असत् की विवेचनशक्ति का अर्जन करना है। इन दो उद्देश्यों से पूर्ण होने पर ही शिक्षा सार्थक होती है। शिक्षित व्यक्ति यदि चरित्रहीन हो तब भी क्या उसे विद्वान कहेंगे ?

कभी नहीं ! यदि कोई व्यक्ति मूर्ख होकर भी विवेक के अनुसार आचरण करता है और ईश्वर-भक्त है, तो वास्तव में वही महापंडित कहलाएगा। यथार्थ ज्ञानी तो वही है जिसे ईश्वर-बोध है। योंही शास्त्र-ज्ञान का प्रदर्शन करना ज्ञान नहीं है। मैं केवल विद्वान व्यक्ति को श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखता। जिसकी आंखों में ईश्वर का स्मरण करते समय प्रेमाश्रु होते हैं, उसी को मैं देवता मानता हूं। भंगी होने पर भी मैं ऐसे व्यक्ति की पग-धूलि का स्पर्श ले अपने को धन्य समझूंगा और एक ही बार दुर्गा या हरिनाम-

स्मरण से जिनके तन में स्वेद, अश्रु, रोमांच आदि सात्विक लक्षण प्रकट होते हैं वह व्यक्ति तो साक्षात् भगवान ही है। उसके चरण-स्पर्श से धरती पावन होती है, हम तो उसके समक्ष अत्यन्त तुच्छ हैं। हम व्यर्थ में धन के लिए हाय-हाय करते हैं। हम एक बार भी तो यह नहीं सोचते कि वास्तव में धनी है कौन ? जिसके पास भगवत्-भक्ति, भगवत्-प्रेम है—वही इस संसार में धनी है। ऐसे व्यक्ति के समक्ष महाराजाधिराज भी दीन भिक्षुक के समान है। भगवत्-भक्ति-जैसे अनमोल धन के अभाव में हम जीवित हैं, यह भी एक विचित्र बात है।

परीक्षा का समय निकट देखकर हम बहुत घबराते हैं, किन्तु एक बार भी यह नहीं सोचते कि जीवन का प्रत्येक पल परीक्षा-काल है। यह परीक्षा ईश्वर और धर्म के प्रति है। स्कूलों की परीक्षा तो दो दिन की है परन्तु जीवन की परीक्षा अनन्तकाल के लिए है, उसका फल हमें जन्म-जन्मान्तर तक भोगना पड़ेगा।

भगवान के श्रीचरणों में जिन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है, उनका जन्म सफल है। दुःख की बात है तो यह कि इस महान सत्य को हम समझते हुए भी नहीं समझते। हम ऐसे अन्धे, अविवादासी और मूर्ख हैं कि किसी भी प्रकार से हमारे ज्ञान-चक्षु नहीं खुलते। हम मनुष्य नहीं, कलि के दास हैं। हमारा अवलम्ब यही है कि भगवान दयालु हैं। घोर पाप में रत रहने पर भी मनुष्य उनकी दया का परिचय पाता है। भगवान की दया असीम है।

जब वैष्णव-धर्म के लोप होने के लक्षण दिखाई देने लगे तो धर्म की अवमानना से व्यथित होकर वैष्णव श्रेष्ठ श्री अद्वैताचार्य ने प्रार्थना की थी—'हे प्रभु, रक्षा करो, रक्षा करो। इस काल में सम्भवतः धर्म स्थिर नहीं रहता। अतः तुम अवतार लो और धर्म का उद्धार करो!' तब नारायण ने चैतन्य देव के रूप में अवतार लिया। पाप के अन्धकार में भी कभी-कभी सत्य, ज्ञान और

प्रेम की ज्योति देखकर यह विश्वास होता है कि अब भी हमारी उन्नति हो सकती है। यदि ऐसा न होता तो भगवान क्यों बार-बार मृत्युलोक में अवतरित होते ?

आपका सेवक,
सुभाष

⊙

इन पत्रों में बाल-सुलभ जिज्ञासाओं की अपेक्षा प्रौढ़ दार्शनिक, आध्यात्मिक विचारों तथा त्याग, सद्धर्म और आदर्श की अनूठी सुरसरि प्रवाहित हो रही है।

बाल सुभाष भारत की परतन्त्रता पर भी चिंतित है। वह *भारतीय जनता को कुण्ठा, दीनता, शोषण और आत्म-शमन* की दारुण अवस्था से द्रवीभूत है।

वह मां की महत्ता, महानता और गौरव-गरिमा का स्मरण करना भी नहीं भूलता।

क्या विचारों और भावनाओं का ऐसा अद्भुत संगम किसी विद्यार्थी की लेखनी में मिलेगा ?

कुछ और पत्रों पर ध्यान दीजिए—

रांची, रविवार

मां !

क्या इस युग में परतन्त्र भारतमाता की एक भी सन्तान स्वार्थरहित नहीं ?

क्या भारतमाता इतनी अभागी है ? हा !

कहां है वह प्राचीन युग ! वे आर्य वीर कहां हैं, जो भारत-माता के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर सकें !

मां ! क्या आप केवल हमारी ही मां हैं अथवा सब भारत-वासियों की मां हैं ? यदि सब भारतवासी आपकी सन्तान हैं तो

उनके कष्टों को देखकर क्या आपकी आत्मा रो नहीं उठती ? मां की आत्मा क्या इतनी कठोर होती है ? नहीं……कभी नहीं हो सकती ! अपनी सन्तान की इस चिन्तनीय दशा को देखकर मां. कैसे मौन हैं !

मां ! आपने सम्पूर्ण भारत में भ्रमण किया है। भारतवासियों की दशा देखकर या उनकी दुर्दशा के सम्बन्ध मे सोचकर, क्या आपका हृदय रो नहीं उठता ? हम मूर्ख और स्वार्थी हो सकते हैं किन्तु मां को तो कभी स्वार्थ-भावना स्पर्श नही कर सकती।

क्या केवल देश की ही दशा शोचनीय है ? देखिये, भारत के धर्म की क्या दशा है !

कहा वह पवित्र सनातन हिन्दू धर्म और कहा हमारा यह पतित आचरण !

कहा वह पवित्र आचरण आर्यकुल का, जिनकी चरण-रज लेकर यह धरती पावन हो गई और कहां हम पतन के गर्त में गिरे हुए उनके वंशधर !

क्या यह पवित्र सनातन धर्म लुप्त होने वाला है ? देखो, चारो ओर नास्तिकता, अविश्वास और पाखंड का साम्राज्य है इसलिए लोगो को इतना कष्ट उठाना पड़ रहा है। उस धार्मिक आर्य जाति के वंशधर अब विधर्मी और नास्तिक हो गए हैं, जिनका नाम, गुण-कीर्तन और ध्यान ही जीवन का एकमात्र ध्येय था। उस भगवान का नाम भी एक बार लेने वाले लोग बहुत कम रह गए हैं। मां ! यह दशा देखकर और इस सम्बन्ध मे सोचकर, क्या आपका मन रो नहीं उठता ?आपके नेत्र सजल नहीं हो जाते ?

मां का हृदय कभी निष्ठुर नहीं होता।

मां ! एक बार आंखें खोलकर देखो कि आपकी सन्तान की क्या दशा हो गई है !

पाप से, ताप से, अन्न के अभाव से वे नरक की अग्नि में विद्धि[illegible]

प्रेम की ज्योति देखकर यह विश्वास होता है कि अब भी हमारी उन्नति हो सकती है। यदि ऐसा न होता तो भगवान क्यों बार-बार मृत्युलोक में अवतरित होते ?

आपका सेवक
सुभाष

⊙

इन पत्रों में बाल-सुलभ जिज्ञासाओं की अपेक्षा प्रौढ़ दार्शनिक, आध्यात्मिक विचारों तथा त्याग, सद्धर्म और आदर्श की अनूठी सुरसरि प्रवाहित हो रही है।

बाल सुभाष भारत की परतंत्रता पर भी चिंतित है। वह भारतीय जनता की कुण्ठा, दीनता, शोषण और आत्म-शमन की दारुण अवस्था से द्रवीभूत है।

वह मां की महत्ता, महानता और गौरव-गरिमा का स्मरण करना भी नहीं भूलता।

क्या विचारों और भावनाओं का ऐसा अद्भुत संगम किसी विद्यार्थी की लेखनी में मिलेगा ?

कुछ और पत्रों पर ध्यान दीजिए—

रांची, रविवार

मां!

क्या इस युग में परतन्त्र भारतमाता की एक भी सन्तान स्वार्थरहित नहीं ?

क्या भारतमाता इतनी अभागी है? हा!

कहां है वह प्राचीन युग! वे आर्य वीर कहां हैं, जो भारतमाता के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर सकें!

मां! क्या आप केवल हमारी ही मां हैं अथवा सब भारतवासियों की मां हैं? यदि सब भारतवासी आपकी सन्तान हैं तो

उनके कष्टों को देखकर क्या आपकी आत्मा रो नहीं उठती ? मां की आत्मा क्या इतनी कठोर होती है ? नहीं······कभी नहीं हो सकती ! अपनी सन्तान की इस चिन्तनीय दशा को देखकर मां, कैसे मौन हैं !

मां ! आपने सम्पूर्ण भारत में भ्रमण किया है। भारतवासियों की दशा देखकर या उनकी दुर्दशा के सम्बन्ध मे सोचकर, क्या आपका हृदय रो नहीं उठता ? हम मूर्ख और स्वार्थी हो सकते हैं किन्तु मां को तो कभी स्वार्थ-भावना स्पर्श नहीं कर सकती।

क्या केवल देश की ही दशा शोचनीय है ? देखिये, भारत के धर्म की क्या दशा है !

कहा वह पवित्र सनातन हिन्दू धर्म और कहां हमारा यह पतित आचरण !

कहा वह पवित्र आचरण आर्यकुल का, जिनकी चरण-रज लेकर यह धरती पावन हो गई और कहां हम पतन के गर्त में गिरे हुए उनके वंशधर !

क्या यह पवित्र सनातन धर्म लुप्त होने वाला है ? देखो, चारो ओर नास्तिकता, अविश्वास और पाखंड का साम्राज्य है इसलिए लोगो को इतना कष्ट उठाना पड़ रहा है। उस धार्मिक आर्य जाति के वंशधर अब विधर्मी और नास्तिक हो गए हैं, जिनका नाम, गुण-कीर्तन और ध्यान ही जीवन का एकमात्र ध्येय था। उस भगवान का नाम भी एक बार लेने वाले लोग बहुत कम रह गए हैं। मां ! यह दशा देखकर और इस सम्बन्ध मे सोचकर, क्या आपका मन रो नहीं उठता ? आपके नेत्र सजल नहीं हो जाते ?

मां का हृदय कभी निष्ठुर नहीं होता।

मां ! एक बार आंखें खोलकर देखो कि आपकी सन्तान की क्या दशा हो गई है !

पाप से, ताप से, अन्न के अभाव में वे नरक की अग्नि में विशि

मिट रहे हैं। उस पवित्र सनातन धर्म की क्या दशा हो गई है ! वह पवित्र धर्म अब लुप्त होने वाला है !

अविश्वास, नास्तिकता, कुसंस्कार में हम लिप्त हैं। हम कितने पतित और भ्रष्ट हो गए हैं ! इसके अतिरिक्त आज धर्म के नाम पर अधर्म को प्रश्रय मिल रहा है।

क्या यह सब बातें आपको व्याकुल नहीं कर रही हैं ? आपको मर्मवेदना नहीं होती ? क्या हमारा देश निशिदिन पतन के गर्त में गिरता ही जाएगा ?

क्या भारत मां की एक भी सन्तान अपने स्वार्थों को तिलांजलि देकर मां के लिए अपना जीवन उत्सर्ग नहीं करेगी ?

हम और कब तक सोते रहेंगे ? हम कब तक निर्जीव खिलौने की भांति देखते रहेंगे ? क्या भारतमाता एवं सनातन धर्म का यह रुदन हमें सुनाई नहीं देता ? क्या वह रुदन हमें व्यथित नहीं करता ?

हम कब तक हाथ पर हाथ धरे धर्म की यह दुर्दशा देखते रहेंगे ? हमें अब जागना होगा ! आलस्य त्यागकर कर्म-क्षेत्र में उतरना होगा ! परन्तु दुःख तो इसी बात का है कि क्या इस स्वार्थ-पूर्ण युग में मनुष्य अपना स्वार्थ त्यागकर, भारतमाता की सेवा करने में तत्पर होंगे ?

चौरासी लाख योनियों के पश्चात् यह मनुष्य-जन्म, दुर्लभ मानव-देह प्राप्त हुई है। बुद्धि, विवेक और आत्मा प्राप्त हुई है। परन्तु इन सबको पाकर भी यदि पशुओं के समान इन्द्रियों के दास बने रहे, अपने-अपने स्वार्थ में लिप्त रहे तो इस मानव-देह-प्राप्ति से क्या लाभ ? धर्म और देश के लिए जीवित रहना ही यथार्थ जीवन है। मां ! जानती हो, यह सब बातें क्यों लिख रहा हूं और कहूं भी किससे ? कौन मेरी इन बातों को सुनेगा ? जिनका जीवन स्वार्थ से पूर्ण है, वे तो इन बातों को सोच ही नहीं सकते क्योंकि

ऐसा करने से उनके स्वार्थों को ठेस लगेगी। परन्तु मैं जानता हूं कि मां का जीवन स्वार्थपूर्ण नहीं होता—सन्तान और देश के लिए होता है। यदि आप भारतमाता का इतिहास पढ़ें तो देखेंगी कि कितनी ही माताओं ने भारत की सेवा में जीवन उत्सर्ग कर दिया। अहिल्याबाई, मीराबाई और बहुत-सी हैं, जिनके नाम मुझे स्मरण नहीं।

हम मां के स्तन-पान करके बड़े होते हैं इसलिए मां के उपदेश और शिक्षा जितना प्रभाव डाल सकते हैं, उतना अन्य बातें नहीं।

मां! यदि सन्तान कहे कि तुम अपने स्वार्थ में ही बंधी रहो तो समझाना चाहिए कि सन्तान ही अभागी है। तब तो यह निश्चित है कि इस कलियुग में और अधिक श्रेष्ठ लोगों का आविर्भाव नहीं होगा। भारत की श्रेष्ठता नष्ट हो गई है और अब उसके उद्धार के लिए कुछ भी किया नहीं जा सकता।

चारों ओर निराशा ही दिखाई देती है। यदि वास्तव में अब निराशा की ही शरण लेनी है, बैठे-बैठे अपना पतन ही देखना है, तो इतना कष्ट क्यों भोगें?

जब इस जीवन में कोई श्रेष्ठ कर्म नहीं कर सकते तो जीवित रहना व्यर्थ है। मैं चिरकाल तक सबका सेवक बनकर रहना चाहता हूं।······इति।

आपका सेवक
सुभाष

⊙

कटक,
रविवार, सन् १६१२

मां!

बताओ तो हमारी इस शिक्षा का क्या उद्देश्य है? मेरे लिए इतना धन व्यय कर रही हो। दोनों समय गाड़ी से स्कूल भेजती हो।

एक दिन में चार-पांच बार भर-पेट भोजन कराती हो। सुन्दर वस्त्र पहनाती हो, नौकर-नौकरानी रखती हो।

मैं सोचता हूं कि मेरे लिए तुम इतना कष्ट क्यों उठाती हो?

विद्यार्थी-जीवन समाप्त होने पर हमें कर्मक्षेत्र में प्रवेश करना है। फिर हम जीवन-भर गधे की भांति परिश्रम करेंगे और अन्त में हमारा देहान्त हो जाएगा। मां! आप जीवन में मुझे किस क्षेत्र में कार्य करते देखकर प्रसन्न होंगी? मुझे ज्ञात नहीं कि आपकी आकांक्षा क्या है। बड़ा होने पर मैं किस पद पर नियुक्त होऊं, जिससे आपको प्रसन्नता होगी?

मां! क्या जज, मजिस्ट्रेट, बैरिस्टर अथवा किसी शासकीय पद पर मेरे नियुक्त होने से आपको सर्वाधिक प्रसन्नता होगी?

जब धन-कुबेर समझकर लोग मेरी पूजा करेंगे, तब आपको आनन्द मिलेगा?

बहुत साधन गाड़ी, घोड़ा, मोटरें होंगी, बहुत-से नौकर-चाकर और विशाल भवन होगा, बड़ी जमींदारी होगी, तब आपको सुख मिलेगा? अथवा दरिद्र होकर भी मैं विद्वान और गुणी व्यक्तियों के द्वारा सम्मानित होऊंगा, तब आपको प्रसन्नता होगी? मां! मेरी तीव्र इच्छा है कि आप मुझे बतायें कि मुझे कैसा देखकर आपको प्रसन्नता होगी? दयामय प्रभुवर ने हमें मनुष्य-योनि में जन्म दिया है और स्वस्थ शरीर, बुद्धि, शक्ति आदि प्रदान की है। आखिर किसलिए?

ईश्वर ने अपनी पूजा के लिए ही मनुष्य को ये दुर्लभ गुण दिये होंगे। किन्तु हम उसकी पूजा कब करते हैं? दिन में एक बार भी हृदय से स्मरण नहीं करते। मां! यह सोचकर दुख होता है कि जिस ईश्वर ने हमारे लिए इतना किया, जो सुख-दुख में, घर और [illegible], जो सदैव ही हमारा मित्र है, जो हमारे निकट सदैव ही है, हमारे मन-मन्दिर में निवास करता है, जो ईश्वर हमारा

आत्मीय है, उसे हम एक बार भी हृदय में स्मरण नहीं करते।

संसार के तुच्छ पदार्थों के लिए हम कितना रोते हैं किन्तु ईश्वर के लिए हम अश्रुपात नहीं करते। मां, हम पशुओं से अधिक कृतघ्न पाषाण-हृदय हैं। उस शिक्षा को धिक्कार है जिसमें ईश्वर का नाम नहीं और उस व्यक्ति का जन्म निरर्थक है, जो प्रभु का नाम-स्मरण नहीं करता। प्यास लगने पर लोग नदी-सरोवर का जल पीकर प्यास बुझाते हैं, पर इससे क्या मन की प्यास बुझती है ? नहीं, मन की प्यास साधारण जल से नहीं बुझती। इसीलिए शास्त्रकारों ने लिखा है—

'भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढ़मते।'

भगवान ने कलियुग में एक नई सृष्टि का सृजन किया है। यह सृष्टि बाबू लोगों की है, जो किसी अन्य युग में नहीं थी। हम भी बाबू-सम्प्रदाय के हैं। प्रभु के दिये दो पैर हैं किन्तु हम २०-२२ कोस पैदल नहीं चल सकते क्योंकि हम बाबू हैं। हमारी जो बाहें हैं परन्तु शारीरिक श्रम नहीं कर सकते, हाथ से काम नहीं कर सकते। ईश्वर ने हमें बलिष्ठ शरीर दिया है परन्तु हम श्रम करना छोटे व्यक्तियों का कार्य समझकर श्रम से घृणा करते हैं।

इसका कारण यही है कि हम बाबू हैं। हम सब काम नौकरों से करवाते हैं, हाथ-पैर चलाने में कष्ट होता है। हम बाबू हैं, गर्म देश में जन्म लेकर भी हम गर्मी सहन नहीं कर सकते। साधारण ठंड से हम इतना घबराते हैं कि सारे शरीर को वस्त्रों के बोझ से लाद लेते हैं क्योंकि हम बाबू हैं। हम प्रत्येक स्थान पर अपने को बाबू कहते हैं किन्तु वास्तव में हम मनुष्यता से दूर हैं, मनुष्य के रूप में निरे पशु हैं। पशु से भी अधम हैं। क्योंकि हमारे पास ज्ञान है, विवेक है, पशुओं के पास वह भी नहीं। हम जन्म से ही सुख-विलास में पोषित होने के कारण तनिक-सा भी कष्ट नहीं सहन कर सकते। इसी कारण हम इन्द्रियों पर नियन्त्रण नहीं रख पाते, उन्हें

जीत नहीं पाते। जीवन-भर इन्द्रियों के दास बनकर रहते हैं। बोझिल जीवन व्यतीत करते हैं।

हम पढ़ रहे हैं। आगे नौकरी का लालच और धन का लोभ रहने पर हमारी शिक्षा का क्या होगा? क्या हम वास्तव में मानवता के अधिकारी बन सकेंगे? आपका क्या विचार है?

हम और हमारा देश दिन-प्रतिदिन पतन के गर्त में गिर रहे हैं। कौन हमारा उद्धार करेगा? बंगालियों का उद्धार केवल बंग-मातायें कर सकती हैं।'''शेष शुभ।

आपका सेवक
सुभाष

⊙

कटक,
शनिवार, सन् १९१३

मां!

भारतवर्ष भगवान का बहुत ही प्रिय स्थान रहा है। यहां भगवान ने युग-युग मे अवतार लेकर पाप से बोझिल धरती का उद्धार किया है और भारत के लोगों के हृदय में धर्म तथा सत्य की स्थापना की। देखो मां, भारत में सब कुछ है—प्रचंड गर्मी, प्रबल शीत, अधिक वर्षा, मनोहर शरद् और वसन्त।

दक्षिण में स्वच्छ जल से परिपूर्ण पवित्र गोदावरी दोनों किनारों का स्पर्श करती है, कल-कल ध्वनि के साथ सागर की ओर निरन्तर भागी जा रही है। कैसी विचित्र है वह! स्मरण करते ही रामायण की पंचवटी याद आती है। तब याद आते हैं राम, लक्ष्मण और सीता। समस्त राज्य और सम्पदाओं को त्यागकर स्वर्गिक सुख की अनुभूति करते हुए गोदावरी के तट पर समय व्यतीत कर रहे हैं। सांसारिक दुःखों की छाया उनके तन-सरोजों को मलिन नहीं कर सकती।

मा ! दृष्टि उठाने पर और भी पवित्र हृदय सामने आते हैं—पवित्र जल से भरी जाह्नवी बह रही है। रामायण का दृश्य याद आता है। देखता हूं वाल्मीकि जी का वह तपोवन—महर्षि के पावक कंठ से निकले हुए पवित्र वेद-मंत्रों की ध्वनि से गुंजरित। वयोवृद्ध ऋषि आसन पर बैठे हैं और उनके निकट उनके शिष्य लव और कुश बैठे हैं। महर्षि उन्हें पढ़ा रहे हैं। पावन वेद-ऋचाओं की ध्वनि से आकर्षित होकर कराल विषधर भी अपना विष त्याग, फन उठाये, मौन हो, मन्त्र-ध्वनि सुन रहा है।

गंगा में जल पीने आई हुई गउएं भी मस्तक उठाकर वेद-मंत्र सुन रही हैं, निकट ही मृग सोया है और ऐसा प्रतीत होता है कि वह निर्निमेष दृष्टि से ऋषि की ओर देख रहा है। रामायण में सब कुछ पावन है, साधारण तप का दर्शन भी, परन्तु धर्म का त्याग कर देने के कारण हम उस पवित्रता को समझ नहीं पाते।

एक पवित्र दृश्य और याद आ रहा है। त्रिभुवन तारिणी भागीरथी बह रही है, उसके तट पर योगी बैठे हैं। कोई अर्द्ध-निमीलित नेत्रों से प्रातःसंध्या में लीन है, कोई वन-फूल चयन कर, प्रतिमा बनाकर, चन्दन, धूप आदि से पूजन कर रहे हैं। कोई मन्त्रोच्चारण से दिशाओं को गुंजरित कर रहे हैं, कोई भागीरथी के पवित्र जल से आचमन कर स्वयं को पवित्र कर रहे हैं। कोई योगी गुनगुनाते हुए फूलों को चुन रहे हैं। सम्पूर्ण दृश्य पवित्र है। नेत्र तथा हृदय को प्रिय है। परन्तु जब यह स्मरण होता है कि वे ऋषि कहां हैं? उनके वे पवित्र मन्त्रोच्चारण कहां हैं? और कहां हैं उनके यज्ञ-पूजन आदि? स्मृति से हृदय विदीर्ण हो जाता है।

आपका
सुभाष

परम पूजनीया माता जी,

चरणस्पर्श।

पिछले पत्र में मैंने कांग्रेस के विषय में लिखने की धृष्टता की थी···हमारा हृदय आत्म-विश्वास से परिपूर्ण है। फिर भी मां के प्रति हमारे हृदय में अटूट श्रद्धा है।···मां के अतिरिक्त अन्य कोई मां के समान पूज्य नहीं है।

हमारा इतिहास गवाह है कि विपत्ति-काल में सदा हमने मां का आह्वान किया है।

हमारा राष्ट्रीय अभियान 'वन्दे मातरम्' ध्वनि से ही प्रारम्भ हुआ है।

मैं अपना परिचय आपकी सेवा में रखकर दे रहा हूं. आप मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मेरे द्वारा आपका नाम कलंकित न होने पाए। मैं आपका योग्यपुत्र सिद्ध हो सकूं, बस मेरी इतनी ही आकांक्षा है। मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं अपने कंटकाकीर्ण पथ पर अविचलित चलता रहूं।

अपनी धृष्टता और अयोग्यता की चिन्ता से मैं व्यथित रहता हूं। मेरा समर्पण काल्पनिक नहीं, वरन् सम्पूर्ण रूप से यथार्थ पर आधारित है।

मैं भगवान से सदैव शक्ति और साहस प्रदान करते रहने की प्रार्थना किया करता हूं।

परन्तु कभी-कभी ऐसी शंका होती है कि देश जो चाहता है, वह मैं नहीं दे पाऊंगा। सम्भवतः मेरा प्रयत्न उस बौने के समान है, जो चन्द्रमा को स्पर्श करने की चेष्टा करे···

मां! क्या मैं आपकी सेवा के अधिकार से वंचितही रह जाऊंगा? क्या मैं पराया बनकर ही रह जाऊंगा?···देश को आपसे बड़ी आशायें हैं। आप देश को क्या दे सकती हैं, इसका निर्णय स्वयं आपको करना है। किन्तु यदि देश को आपके द्वारा उसकी इच्छित

वस्तु प्राप्त नहीं हुई, तो यह देश का दुर्भाग्य होगा।

आपने लिखा था कि नये लोगों और वृद्धों की विचारधारा एवं कार्य-प्रणाली एक-सी नहीं होती—यह सत्य है; किन्तु नयों में बहुतेरे वृद्ध-जैसा अनुभव भी रखते हैं। दोनों के मिलाप से कार्य में संतुलन स्थापित हो जाता है।

यदि नये लोग आपको अपना साथी मान लें और आपके नेतृत्व में श्रद्धा-विश्वास व्यक्त करें, तो आपको उनके नेतृत्व में क्या आपत्ति होगी?

यदि आप इस समय हमारा नेतृत्व नहीं करतीं तो सम्पूर्ण बंगाल में दूसरा कोई व्यक्ति नहीं है, जिसका नेतृत्व हम हृदय से स्वीकार कर सकें। यदि हमें आपका नेतृत्व प्राप्त न हो सका तो हम भाग्यहीनों को आत्म-प्रतिष्ठा के मार्ग पर चलना होगा। आपका आशीर्वाद ही हमारे लिए अमूल्य प्रेरणा और प्रसाद है।

सादर प्रणाम सहित

सुभाष

[देशबन्धु की पत्नी श्रीमती बासन्ती देवी के नाम]

राजनीतिक पथ-प्रदर्शक के नाम

"आप हमारे बंगाल के राष्ट्रीय-अभियानों के नेता एवं मार्ग-दर्शक हैं अतएव मैं आपके समक्ष प्रस्तुत हूं। अपनी साधारण शिक्षा, तुच्छ बुद्धि, कार्यक्षमता एवं निष्ठासहित मैं राष्ट्र-सेवा के लिए तत्पर हूं।

भारतमाता के श्रीचरणों में समर्पित करने के लिए मेरे पास इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।"

[सुभाष]

देशबन्धु चित्तरंजनदास के नाम

उन दिनों किसी भारतीय का आई० सी० एस० की परीक्षा में चुन लिया जाना उसके लिए गर्व और गौरव का विषय था।

सुभाष बाबू ने उक्त प्रतियोगिता मे सफलता ही नही प्राप्त की वरन् सफल प्रतियोगिता में उनका चतुर्थ स्थान था। किन्तु इस असाधारण सफलता के लिए उनके मन में किंचित् भी गर्व और मोह न था। होता भी क्योकर ? जो हृदय की पूर्ण निष्ठा के साथ जननी जन्मभूमि की सेवा का व्रत धारण कर चुका हो उसके लिए आई० सी०एस० क्या, इग्लैण्ड के सम्राट् का पद-प्रस्ताव भी निरर्थक था।

फिर सुभाष इस प्रतियोगिता मे सम्मिलित ही क्यों हुए थे ? सम्भवत. अपनी प्रतिभा और योग्यता के विरुद्ध खड़ी की गई चुनौती का उत्तर देने के लिए। अन्यथा उनका ध्येय-पथ तो पूर्व निश्चित था।

उन्होंने आई० सी० एस० को ठुकराते हुए घोषणा की थी—"मैं विदेशी सत्ता के अधीन कार्य नहीं कर सकता।"

अपने पद-त्याग करने का स्पष्टीकरण उन्होंने इन शब्दों मे दिया था—"मेरे विचार से जो व्यक्ति देश-सेवा का सकल्प रखता हो वह ब्रिटिश राज्य के प्रति वफादार नही रह सकता। मैंने अपने हृदय और आत्मा की सम्पूर्ण निष्ठा के साथ भारत की सेवा करने का सकल्प किया है; अतः मुझसे ब्रिटिश सरकार के अधीन अफसरशाही का निर्वाह नही हो सकेगा।"

पिता सर रायबहादुर जानकीनाथ पुत्र के द्वारा पद-त्याग किए जाने की इस घोषणा पर स्तब्ध रह गए थे। उन्होंने तार के द्वारा सुभाष से पद-त्याग करने का कारण पूछा था।

सुभाष का उत्तर था—"इंगलैण्ड के सम्राट् के प्रति निष्ठावान् होने की शपथ ग्रहण करना मेरे लिए असम्भव था। वह प्रतिज्ञा ऐसे भद्दे ढंग से प्रारम्भ हो रही थी, जिसे मेरे हृदय ने स्वीकार नहीं किया।"

सुभाष के पद-त्याग की इस घोषणा ने बंगाल में तहलका मचा दिया था। सुदूर विदेश में बैठे सुभाष भारत की तत्कालीन स्थितियों से अनभिज्ञ नहीं थे। उनका मन और मस्तिष्क भारत की समस्याओं में उलझा हुआ था।

उन्हीं दिनों उनका ध्यान बंगाल के वरिष्ठ जनप्रिय नेता देश-बन्धु चित्तरंजनदास की इस मार्मिक अपील की ओर आकर्षित हुआ—

"नवयुवक ही देश के प्राण हैं। स्वतंत्रता-संग्राम का पावन-प्रयाण उन्हीं के योगदान पर निर्भर है। नवयुवकों की संगठित शक्ति ही इस महायज्ञ को पूर्णता प्रदान कर सकती है।"

भारत की स्वतंत्रता के लिए उत्सर्ग की भावना से अभिभूत सुभाष के लिए देश-बन्धु की इस अपील ने प्रेरणा-स्रोत का कार्य किया। वास्तव में उन्हें एक ऐसे पद-प्रदर्शक की कामना थी जो सेवा के मार्ग में उनका समुचित मार्ग-दर्शन करे।

सुभाष ने १६ फरवरी, १९२१ को केम्ब्रिज से देशबन्धु के नाम एक विस्तृत पत्र लिखकर, अपनी मनोकामना प्रकट करते हुए, उनसे सेवा का अवसर देने की प्रार्थना की। यह सारगर्भित पत्र सुभाष की सेवा-भावना की कितनी पवित्र और स्मरणीय झांकी प्रस्तुत करता है—

मान्यवर!

मैं आपके लिए अपरिचित और अचरज का विषय हो सकता हूं; किन्तु आशा है कि मेरा परिचय जानकर आप मुझे पहचान जायेंगे।

यह पत्र मैं आपको एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय में लिख रहा हूं, अतएव आवश्यक है कि सर्वप्रथम आपको अपना परिचय दे दूं।

मेरे पिता श्री जानकीनाथ बोस कटक में वकालत करते हैं। कुछ वर्ष पूर्व वे वहां सरकारी वकील भी रह चुके हैं। मेरे ज्येष्ठ भ्राता श्री शरत् चन्द्र बोस कलकत्ता हाईकोर्ट में बैरिस्टरी करते हैं। आप मेरे पिता एवं बड़े भाई को अवश्य ही जानते होंगे।

पांच वर्ष पूर्व मैं कलकत्ता प्रेसीडेंसी कालेज का विद्यार्थी था। संघर्ष के कारण मैं १९१६ में विश्वविद्यालय से निष्कासित कर दिया गया था। दो वर्ष बेकार बैठने के पश्चात् मुझे पुनः अपना अध्ययन आरम्भ करने का अवसर मिल सका। मैंने सन् १९१९ में बी० ए० आनर्स की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

सन् १९१९ के अक्टूबर मास में मैं यहां आया। मैंने यहां सिविल सर्विस (I. C. S.) की परीक्षा उत्तीर्ण की और उत्तीर्ण परीक्षार्थियों में चतुर्थ स्थान प्राप्त किया।

अब मैं मुख्य विषय पर आता हूं। सरकारी नौकरी में जाने की मेरी रत्तीमात्र भी इच्छा नहीं है। मैंने पिता जी और बड़े भाई साहब को इस सम्बन्ध में पत्र लिखा है। अभी तक मुझे उनका उत्तर नहीं प्राप्त हुआ है। उनकी सहमति पाने के बाद मैं उन्हें बताऊंगा कि नौकरी छोड़ने के बाद मैं कौन-सा कार्य करूंगा।

मैं भली भांति जानता हूं कि सरकारी नौकरी छोड़ने के बाद यदि मैंने अपने को पूर्ण निष्ठा के साथ राष्ट्रीय कार्यों में लगाया, तो करने के लिए मेरे पास अनेक कार्य होंगे। जैसे नेशनल कालेज में अध्यापन कार्य, पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं का लेखन, प्रकाशन, ग्राम्य विकास संस्थाओं का संचालन एवं सामान्य जनता में शिक्षा का प्रसार आदि।

किन्तु यदि मैं अपने परिवार को यह स्पष्ट कर सकूं कि वास्तव में नौकरी छोड़ने के बाद मैं कौन-सा कार्य करूंगा, तो

उनकी अनुमति मुझे आसानी से मिल सकेगी। यदि मैंने उनकी सहमति से नौकरी छोड़ी तो मुझे उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य करने का खेद न होगा।

आप देश की स्थिति को भली भांति जानते हैं। मैंने सुना है कि आपने कटक और ढाका में नेशनल कालेज स्थापित किये हैं और अंग्रेजी और बंगाली भाषा में 'स्वराज्य' नामक पत्र निकालना चाहते हैं। आपने बंगाल के विभिन्न ग्राम-अंचलों में ग्राम सेवा संस्थायें भी स्थापित की हैं।

मैं यह जानने को उत्सुक हूं कि राष्ट्र-सेवा के इस महान कार्यक्रमों में आप मेरी किस प्रकार की सेवा स्वीकार करेंगे? यद्यपि शिक्षा और बुद्धिमत्ता में मैं साधारण हूं किन्तु मुझमें नवयुवक का अदम्य उत्साह है। मैं अविवाहित हूं। जहां तक मेरी शिक्षा का प्रश्न है, दर्शन शास्त्र मेरे विशेष अध्ययन का विषय रहा है, इस विषय में मैंने आनर्स किया है।

मैं सिविल सर्विस परीक्षा को धन्यवाद देता हूं जिसके कारण मुझे विभिन्न विषयों के अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ।

अर्थशास्त्र, राजनीति, अंग्रेज़ी, यूरोपीय इतिहास, विधि एवं संस्कृत तथा भूगोल आदि विषय का मुझे पर्याप्त ज्ञान है।

मैं ऐसी आशा करता हूं कि यदि मैं इस कार्य क्षेत्र में आऊं तो अपने दो-एक बंगाली मित्रों को भी इस क्षेत्र में आने के लिए प्रेरित कर सकता हूं...

मैं यहां बैठकर यह अनुमान नहीं कर सकता कि इस समय भारत में कौन-सा कार्य-क्षेत्र मेरे लिए उपयुक्त है। परन्तु ऐसा अनुभव अवश्य करता हूं कि वहां आने पर मेरे लिए अध्यापन और पत्रिकाओं में लेख लिखने आदि का कार्य उपयुक्त और उपलब्ध होगा।

मैं सिविल सर्विस से त्यागपत्र देने को पूर्णतः कटिबद्ध हूं। यदि ऐसा सम्भव हो गया तो मैं अपना समय निरर्थक चिन्तन में नहीं नष्ट

करूंगा वरन् नौकरी छोड़ते ही तुरन्त राष्ट्र-सेवा के कार्य में लग जाऊंगा।

इस समय आप बंगाल राष्ट्रीय चेतना के सर्वेसर्वा हैं, अत. मैं आपको पत्र लिख रहा हूं। आपने भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन को जो दिशा और ज्योति प्रदान की है, समाचार पत्रों द्वारा उसका संदेश यहां भी प्रसारित है। भारत की पुकार यहां तक गूंज रही है। एक मद्रासी विद्यार्थी इस आह्वान से प्रभावित होकर राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के लिए स्वदेश लौट रहा है।

अब तक यहां कैम्ब्रिज मे असहयोग आन्दोलन पर लम्बे वाद-विवाद के अतिरिक्त और कुछ नहीं हुआ है। मैं आशा करता हूं कि यदि कोई व्यक्ति यहां के नवयुवकों का मार्ग-दर्शन करने के लिये सामने आये तो अवश्य ही लोग उसका अनुसरण करेंगे।

आप हमारे बंगाल के राष्ट्रीय अभियानों के नेता एवं मार्ग-दर्शक हैं; अतएव मैं आपके समक्ष प्रस्तुत हूं।

अपनी साधारण शिक्षा, तुच्छ बुद्धि, कार्यक्षमता एवं निष्ठा-सहित मैं राष्ट्र-सेवा के लिए तत्पर हूं। भारतमाता के श्रीचरणों में समर्पित करने के लिए मेरे पास इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। आपको लिखने का आशय केवल यह है कि इस राष्ट्रीय अभिमान में आप मुझे किस सेवा का अवसर देंगे?

आपका निर्णय प्राप्त करने के बाद मैं अपने पिताजी एवं बड़े भाई साहब को अपने निश्चय के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से लिख सकूंगा साथ ही उक्त कार्य के लिये अपने-आपको तैयार कर सकूंगा। इस समय मैं एक सरकारी कर्मचारी हूं क्योंकि मैं एक आई० सी० एस० के रूप में हूं अतएव मैं आपके नाम सीधे पत्र नहीं लिख सकता, मेरा पत्र सेन्सर कर लिया जायेगा। अतएव मैं अपने एक मित्र श्री प्रमथनाथ सरकार द्वारा आपको यह पत्र हाथ के हाथ भेज रहा हूं। वे आपको यह पत्र देंगे।

भविष्य में जब भी आपको पत्र लिखूंगा, वह आपको इसी माध्यम से प्राप्त होगा। आप मुझे निश्चिन्ततापूर्वक यहां पत्र भेज सकते हैं, आपके पत्रों के सेन्सर का भय नहीं होगा।

मैंने यहां किसी व्यक्ति को अपने विचारों के सम्बन्ध में नहीं *बताया है। केवल अपने पिताजी एवं बड़े भाई को पत्र लिखा है।*

मैं इस समय एक सरकारी कर्मचारी हूं, अतएव जब तक मैं पद त्याग न दूं, कृपया मेरे विचारों के सम्बन्ध में किसी से चर्चा न करें।

मेरे पास कुछ और कहने के लिये शेष नहीं है। मैं सर्वथा तैयार हूं—आपको केवल मेरा निर्देशन करना है कि मैं किस ओर जाऊं।

मेरा व्यक्तिगत विचार है कि यदि आप 'स्वराज्य' का अंग्रेजी संस्करण आरम्भ करें तो मैं उसके सह-सम्पादक विभाग में कार्य कर सकता हूं। साथ ही नेशनल कालेज की जूनियर कक्षाओं में अध्यापन कार्य भी कर सकूंगा।

कांग्रेस के सम्बन्ध में, मेरे मस्तिष्क में, कुछ विचार हैं। मेरे विचार से कांग्रेस की सभाओं के लिए एक स्थायी स्थान होना चाहिये। हमारे पास इस कार्य के लिए एक सुव्यवस्थित मकान होना चाहिए। यहां पर शोध-छात्रों का एक ऐसा दल होना चाहिए जो विभिन्न राष्ट्रीय समस्याओं पर शोध करें।

मुझे इस बात का भय है कि हमारी कांग्रेस ने भारतीय मुद्रा विनिमय के सम्बन्ध में कोई निश्चित योजना नहीं कार्यान्वित की है।

अतएव यह अनिर्णीत-सा है कि अन्तर्देशीय प्रदेशों के सम्बन्ध में कांग्रेस का व्यवहार कैसा होगा। कांग्रेस ने स्त्री-पुरुषों (Franchise) के सम्बन्ध में एवं शोषित जाति के लिए क्या निर्णय किया है? इस प्रकार की अन्य समस्यायें हैं।

मेरा व्यक्तिगत विचार यह है कि कांग्रेस का एक स्थायी दल होना चाहिए जो जन-जन की समस्याओं का अनुसंधान करे'''मैं

कहना चाहूंगा कि आज कांग्रेस के पास अनेक राष्ट्रीय समस्याओं के सम्बन्ध में कोई निश्चित योजना नहीं है। इसीलिए मैं कहता हूं कि कांग्रेस के पास एक स्थायी भवन और कर्मठ कार्यकर्ता होने चाहिएं।

इनके साथ ही कांग्रेस को एक सर्वेक्षण विभाग भी खोलना चाहिए और इस विभाग को राष्ट्र की स्थितियों, परिस्थितियों एवं घटनाओं का सकलन और आंकड़ा रखना चाहिए। उक्त विभाग के प्रचार विभाग द्वारा इन जानकारियों एवं आंकड़ों आदि से सम्बन्धित पुस्तिकायें विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में प्रकाशित कराई जायें और जनता मे निःशुल्क उनका वितरण किया जाय। एक पुस्तक भी प्रकाशित कराई जाये, जिसमें राष्ट्रीय समस्याओं का उल्लेख हो। ऐसी पुस्तक द्वारा कांग्रेस की नीतियों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जा सकेगा।

मैंने बहुत अधिक लिख दिया है। ये प्रश्न आपके लिये नये नहीं हैं किन्तु इन्हें लिखने के लिए मैं किसी से बाध्य नहीं किया गया, अतएव मेरे लिए ये सर्वथा नवीन हैं।

मैं अनुभव करता हूं कि कांग्रेस से सम्बन्धित अहम् कार्य हमारी प्रतीक्षा मे पड़े हैं। यदि आपका आदेश और आशीर्वाद प्राप्त हो सका तो इस कार्य में सहयोग करके मुझे प्रसन्नता होगी।

मैं आपके निर्णय-उत्तर की प्रतीक्षा करूंगा। मैं यह ज्ञात करने के लिए उत्सुक हूं कि आप किन कार्यों में मेरी सेवायें लेना चाहेंगे।

यदि आप किसी को पत्रिकारिता सीखने के लिये इग्लैण्ड भेजने की इच्छा रखते हों तो मैं इस कार्य के लिए तैयार हूं। यह कार्य अगर मुझे मिल जाय तो व्यय-भार नहीं पड़ेगा। यह कार्य आरम्भ करने से पूर्व मैं निश्चय ही सरकारी नौकरी त्याग दूंगा।

आप निश्चिन्त रहें कि नौकरी छोड़ देने पर मेरे भोजन-वस्त्र के लिये व्यवस्था करनी होगी। मुझे घर से आवश्यक साधन-सुविधा मिलती रहेगी।

मैं जून के महीने में घर (स्वदेश) आने का विचार कर रहा हूं।...

आशा है, आप इस विस्तृत पत्र के लिए क्षमा करेंगे। मैं आशा करता हूं कि आप इस पत्र का उत्तर शीघ्रातिशीघ्र देंगे।

कृपया मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

पता—	आपका सादर
फिट्ज विलियम हॉल	सुभाष चन्द्र बोस
कैम्ब्रिज	

मित्र और शरत् दा के नाम

शरत् दा!

मैं किसी भी मार्ग पर चलता रहूं, आपका अभिनन्दन करता रहूंगा। सिविल सर्विस में योगदान करने के विरोध में मेरी प्रमुख युक्ति यह थी कि प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करके मुझे एक विदेशी शासनतंत्र की अधीनता स्वीकार करनी पड़ेगी...

⊙

कैम्ब्रिज
२८-४-२१

आदरणीय भाई साहब!

मेरे पद-त्याग के सम्बन्ध में फिट्ज विलियम हॉल के सेन्सर रेडार्व साहब से वार्तालाप हुआ था। मैंने उनसे जो आशा की थी, उसके ठीक विपरीत हुआ। उन्होंने मेरी विचारधारा का उत्साह के साथ समर्थन किया। मेरे विचार परिवर्तन को जानकर वह विस्मित हो गए। इसका कारण यह था कि उन्होंने किसी भारतीय को अभी तक ऐसा करते नहीं देखा था। जब मैंने कहा कि मैं संवाददाता

बनूंगा तब उन्होंने कहा कि गतानुगतिक सिविल सर्विस की अपेक्षा संवाददाता का जीवन श्रेष्ठ है।

यहां आने से पूर्व तीन सप्ताह तक मैं आक्सफोर्ड मे रहा था। वहा ही मैंने अपना जीवन-दर्शन निश्चित किया था। पिछले कई माह से मैं इस बात से विशेष चिंतित हूं कि किसी भी ऐसे कार्य से कैसे बचा जाए जिससे माता, पिताजी एवं अन्य स्नेहीजनों को दु:ख पहुंचता हो? परन्तु समझ में नहीं आता। इसी कारण नये मार्ग के किनारे खड़े होकर आज पिताजी और माताजी की स्पष्ट इच्छा तथा आपके उपदेश का विरोध करना पड रहा है। मैं किसी भी मार्ग पर चलता रहूं आपका अभिनन्दन करता रहूंगा। सर्विस में योगदानकरने के विरोध में मेरी प्रधान युक्ति यह थी कि प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करके मुझे एक विदेशी शासनतन्त्र की अधीनता स्वीकार करनी पड़ेगी जिसके इस देश मे रहने का नैतिक अधिकार मैं कदापि नहीं स्वीकार करता। एक बार प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करके तीन वर्ष काम करू अथवा तीन दिन, इससे कुछ अन्तर नही पड़ता।

इससे मनुष्य का अधःपतन होता है और आदर्श की हानि भी। सुरेन्द्र नाथ बनर्जी जीवन के अन्तिम दिनों में जो सरकारी उपाधि का मुकुट पहनकर मंत्रित्व के सिंहासन पर बैठ रहे हैं उसका कारण यह है कि वे एडमाण्ड बर्क द्वारा वर्णित सुविधावाद के दर्शन में विश्वास करते हैं। सुविधावाद की नीति ग्रहण करने की स्थिति अभी नहीं आई है। हमें तो जाति का संगठन करना पड़ेगा और हैम्पडन तथा क्रामवेल के समझौतारहित आदर्शवाद के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से वह सम्भव नहीं होगा। मुझे यह विश्वास हो गया है कि ब्रिटिश सरकार से सम्बन्ध-विच्छेद करने का समय अब आ गया है। प्रत्येक सरकारी कर्मचारी, वह भले ही निम्न चपरासी हो अथवा प्रादेशिक गर्वनर, केवल ब्रिटिश सरकार की

कोई उन्हें दोष दे सकते हैं...

मुझे ऐसा जान पड़ता है कि सरकार छोटे दादा के रोग-विश्लेषण को स्वीकार नहीं करती, क्योंकि माननीय मेम्बर ने कहा था—'इस समय मि० सुभाष चन्द्र बोस बहुत सख्त बीमार नहीं हैं।' यह जानने लायक बात होगी कि सरकार किस दशा में मुझे सख्त बीमार समझेगी ? क्या जब मेरी अवस्था ला-इलाज हो जाएगी ? या मेरी मृत्यु के कुछ ही दिन शेष रह जाएंगे ?

छोटेदादा की सिफारिश यह तो नहीं कहती कि मुझे घर न जाने दिया जाय......सिफारिश में यह भी नहीं कहा गया है कि बंगाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेंट एक्ट की समाप्ति के पहले मुझे अपने देश को नहीं लौटना चाहिए। इन सब बातों से मुझे सरकार की नीयत में विश्वास नहीं होता।

बंगाल सरकार यह चाहती है कि मैं बंगाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेंट एक्ट के अन्त तक विदेश में ही रहूं। यह कानून जनवरी, १९३० में समाप्त होगा। लेकिन इस बात की क्या गारंटी है कि उसके बाद उसकी आयु नहीं बढ़ाई जाएगी ?

मि० लोमैन डी० आई० जी०, आई० जी०, सी० आई० डी० के साथ मेरी जो अन्तिम बातचीत हुई थी, उससे मेरे कथन की पुष्टि होती है। मुझे इसमें कोई आश्चर्य नहीं होगा कि यदि १९२५ का बंगाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेंट एक्ट सन् १९२९ में सदा के लिए कानूनी किताब में शुमार कर लिया जाय। इस दिशा में मैं जीवन-भर के लिए अपने देश से निर्वासित हो जाऊंगा। ऐसा करना तो स्वयं अपने लिए ही एक आर्डिनेंस बनाना होगा। यदि सरकार की मंशा बिलकुल सच्ची होती तो वह मुझे सूचित कर देती कि किस तारीख तक मुझे विदेशों में रहना चाहिए...

मुझे यह भली भांति विदित है कि स्विट्ज़रलैंड में ब्रिटिश जासूसों के अतिरिक्त इटालियन, फ्रेंच, जर्मन तथा हिन्दुस्तानी

जासूस अंग्रेज सरकार की नौकरी में नियुक्त रहते हैं और राज-नीतिक 'सदिग्ध व्यक्तियों' का छाया की तरह पीछा करते हैं''' मुझे अपनी जन्मभूमि से स्वेच्छापूर्वक निर्वासित होने की चाह नहीं है; अतएव मेरी इच्छा है कि सरकार इस दृष्टिकोण से विचार करे'

मैंने यह पढ़ा है कि मुझे यह शर्त देनी है कि मैं हिन्दुस्तान, बर्मा और लंका नही लौटूगा, तब मैंने बार-बार अपनी आंखें मली, और अपने मन में कहा—क्या मैं ब्रिटिश सरकार के अस्तित्व के लिए इतना खतरनाक हूँ कि केवल बंगाल प्रान्त से मेरा निर्वासन काफी नही है ?

यदि ऐसा नही है तो क्या ब्रिटिश सरकार ने एक भानमती का पिटारा खड़ा किया है ?

मैं नही समझता हू कि बगाल सरकार के सिवा अन्य प्रान्तीय सरकारो अथवा भारतीय सरकार को मेरे खिलाफ कोई शिकायत है।

सरकार को यह भली प्रकार विदित है कि मैं लगभग ढाई वर्ष से घर से दूर रहा हू और मैं उस बीच अपने माता-पिता तथा अन्य कई रिश्तेदारों से न मिल सका। अब यदि मैं यूरोप जाऊं तो कम-से-कम ढाई साल लगेंगे, जिस बीच मुझे भेंट करने का कोई अवसर नही मिल सकता। यह मेरे लिए कठोर है ही, लेकिन जो मुझे प्यार करते हैं उनके लिए तो यह और भी कठोर है। एक पाश्चात्य व्यक्ति के लिये यह समझना मुश्किल है कि पूर्व के लोग अपने सगे-सम्बन्धियो से कितना अधिक मोह रखते हैं'''सरकार यह बिल्कुल भूल गई है कि उसने मुझे ढाई वर्षों तक कितनी तकलीफों मे डाला है। दुःखी मैं हूं न कि वह। इतने समय तक अकारण ही उसने मुझे बन्द रक्खा है।

मुझसे केवल यह कहा गया है कि मैं अस्त्र-शस्त्रों को संगठित

करने, विस्फोटों को बनाने तथा पुलिस अफसरों को मारने का दोषी हूं।

भला ऐसी दशा में अगर ऐसे ही निराधार दोष सर एडवर्ड मार्शल हॉल या सर जॉन साइमन के ऊपर मढे जाते तो वे भी निरपराधी कहने के अतिरिक्त और क्या सबूत दे सकते थे?

यदि सरकार और किसी नैतिक उत्तरदायित्व को अपने सिर पर लेने को तैयार नहीं है तो उसे कम-से-कम मुझे उसी शारीरिक अवस्था मे मुक्त करना चाहिए, जैसी अवस्था मेरी सन् १६२४ मे थी।

यदि जेल मे मेरा स्वास्थ्य खराब हुआ है तो सरकार को मुझे मुआवजा देना चाहिए। मेरा खर्च तब तक उसे बरदाश्त करना चाहिए जब तक मेरा स्वास्थ्य पूर्ववत् न हो जाय। यदि सरकार ने मुझे एक बार घर जाने दिया होता, मेरे यूरोपीय जीवन का खर्च अपने ऊपर ले लिया होता तथा चंगे होने पर मुझे निष्कंटक रूप से घर लौटने की आज्ञा दी होती तो इस उदारता मे मानवीय अंश होता।

मुझे भी देशबन्धु की याद आ रही है। वे मुझे 'नवयुवक बुड्ढा' कहते थे। क्योंकि मुझमें उन्हें एक निराशा-सी दिखाई पडती थी। एक दृष्टि से मैं निराशावादी हूं क्योंकि मैं भले-बुरे परिणाम की कल्पना करता हूं। सरकार की इस उदारता को अस्वीकार करने का, भीषण से भीषण परिणाम सोचने का मैंने प्रयत्न किया है, लेकिन मैं यह विश्वास नहीं करता कि स्वदेश से आजन्म निर्वासन मृत्युपर्यन्त जेल-जीवन से श्रेयस्कर है।'''स्वतन्त्रता का अमूल्य खजाना प्राप्त करने के पहले हमें व्यक्तिगत रूप से अथवा सामूहिक रूप से अभी कितनी ही कुर्बानियां करनी हैं। ईश्वर को मैं धन्यवाद देता हूं कि मुझे बड़ी शान्ति है और मैं प्रसन्नतापूर्वक किसी भी अग्नि-परीक्षा का, जिसमें वह मुझे जांचना चाहे, सामना

करने के लिए उद्यत हूं। मैं तो यह सोचता हूं कि मैं भारत के विगत पापों का एक छोटे-से रूप में प्रायश्चित्त कर रहा हूं और इसी प्रायश्चित से मुझे आनन्द मिल रहा है। यह सत्य है कि हमारे विचार मर नहीं सकते, हमारे आदर्श राष्ट्र के स्मृति-पटल से मिट नहीं सकते और भावी संतान उन चिर संचित स्वप्नों की अधिकारी होगी। बस यही विश्वास मुझे अग्नि-परीक्षा में सदा विजयी बनाएगा।

कृपया पत्रोत्तर शीघ्र दीजिएगा।

आपका परम स्नेही
सुभाष

⊙

कलकत्ता, शुक्रवार रात्रि
३-१०-१९१४

प्रिय हेमन्त!

हृदय-दान सबसे बड़ा दान है। इसे दान कर देने के पश्चात् कुछ भी शेष नहीं बचता। जिसे हृदय दिया जाता है क्या वह कम सौभाग्य है? उससे अधिक सुखी कौन होगा? परन्तु जो प्रतिदान में हृदय नहीं दे सकता, उसके समान और भी कौन है?

परिणाम? हृदय का दान और प्रतिदान करने वाले दोनों ही व्यक्तियों को शान्ति मिलती है।

दक्षिणेश्वर के काले मन्दिर का चित्र स्मरण आता है। कमलासन पर विराजने वाली मां काली खड्ग हाथ में लिए शिव के आसन पर खड़ी हैं। उनके आगे एक बालक है।

बालक स्वभाववश अस्पष्ट वाणी में रोता हुआ ऐसा प्रतीत होता है मानो कुछ रहा हो—मां, यह लो अपना भला-बुरा! यह लो अपना पाप और यह लो अपना पुण्य! विकराल मुखवाली, भयंकर दांतों वाली मां काली थोड़े से संतुष्ट नहीं होती इसलिए सबका

भजन करना चाहती हैं। पुण्य भी चाहती हैं और पाप भी चाहती हैं। बालक को सब कुछ देना पड़ेगा। नहीं देगा तो मां को शान्ति न होगी। मां छोड़ेगी भी नहीं।

मां को सर्वस्व देना पड़ेगा। मां किसी भी प्रकार संतुष्ट नहीं। इसीलिए बालक रोता है और रोते हुए कहता है—

'यह लो, यह लो!' अश्रुधार बन्द हो गई, कपोल और वक्ष सूख गए, हृदय की तपन शान्त हो गई। जहां बहुत-से कांटों की चुभन-जैसी पीड़ा होती थी अब वहां उसका चिह्न तक शेष नहीं है, अमृत से हृदय परिपूर्ण हो गया। बालक उठकर खड़ा हो गया, अब उसके पास अपना कहने को कुछ भी शेष नहीं बचा। उसने सर्वस्व दे दिया मां को। वही बालक रामकृष्ण है।

तुम्हारा
सुभाष

पं० जवाहरलाल के नाम

प्रिय जवाहर !

कभी-कभी तुम अपने को समाजवादी, 'पक्का समाजवादी' भी कहते हो। मेरी समझ में नहीं आता कि कोई समाजवादी जैसाकि तुम अपने को मानते हो, व्यक्तिवादी कैसे हो सकता है? एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न होता है? मेरे लिये यह भी एक पहेली है कि तुम जिस व्यक्तिवाद के समर्थक हो, उसके जरिये समाजवाद कभी भी कैसे स्थापित हो सकता है?

बहुत साफ-साफ कहूं तो तुम कभी-कभी कार्य-समिति में लाड़-प्यार से बिगड़े बेटे की तरह बर्ताव करते थे और अक्सर तुम्हारा पारा चढ़ जाता था। अब बताओ, तुमने अपनी तमाम गरममिजाजी और उछल-कूद से क्या नतीजे हासिल किये?

सुभाष का पत्र नेहरू के नाम

मुझमें और जवाहरलाल जी मे केवल इतना ही अन्तर है कि वह एक सयोगमात्र है कि उन्होंने केवल भारत में जन्म लिया है। वरना शिक्षा, मानस तथा अन्य सभी दृष्टियों से वे विशुद्ध अंग्रेज हैं, जबकि मैं इसी भूमि का पुत्र हूं।

बहुत साफ-साफ कहूं तो तुम कभी-कभी कार्य-समिति मे लाड़-प्यार से बिगडे बेटे की तरह बर्ताव करते थे और अक्सर तुम्हारा पारा चढ़ जाता था। अब बताओ, तुमने अपनी तमाम गरममिजाजी और उछल-कूद से क्या नतीजे हासिल किये ?

[नेहरू के लिए]

सुभाष और नेहरू के वैयक्तिक, वैचारिक, राजनीतिक एव मत-भेदों के सम्बन्ध मे सामान्य जिज्ञासा उभरकर आती है।

इस विषय मे सुभाष और नेहरू के पत्रों, वक्तव्यो और टिप्पणियों के कुछ महत्त्वपूर्ण अश साकेतिक रूप से द्रष्टव्य हैं—

सुभाष के एक पत्र से—"मैं व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन मे तुम्हारा बहुत लिहाज और खयाल करता आया हू। राजनैतिक दृष्टि से मैंने तुम्हें अपना बड़ा भाई और नेता माना है और अक्सर तुम्हारी सलाह लेता आ रहा हूं···"

इसी पत्र की आगामी कुछ पक्तियां उल्लेखनीय हैं—"मुझे लगता है कि तुम कुछ समय से मुझे बहुत ज्यादा नापसन्द करने लगे हो। यह मैं इसलिए कहता हूं कि कोई भी बात, जो मेरे विरुद्ध पड़ती हो, तुम उसे बड़े उत्साह से ग्रहण कर लेते हो और मेरे पक्ष में जाने वाली बातों की उपेक्षा करते हो। मेरे राजनैतिक विरोधी मेरे खिलाफ जो कुछ कहते हैं, उसे तुम मान लेते हो, किन्तु तुम उनके

खिलाफ कही जा सकने वाली बातों के प्रति करीब-करीब अपनी आंखें बन्द कर लेते हो। मैं इस कथन को आगे स्पष्ट करने की कोशिश करूंगा।"

इन पंक्तियों से लगता है कि नेहरू और सुभाष के बीच कहीं मतभेद और राजनैतिक प्रतिद्वन्द्विता की खाई खिंच गई थी।

इस मतभेद के मूल में नेहरूजी के एक वक्तव्य का कुछ अंश प्रकाश डालता है।

सुभाष अपने देश की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए जर्मनी, इटली और जापान-जैसे ब्रिटिश-विरोधी राष्ट्रों से सहायता स्वीकार करने *के नाम पर फासिस्ट करार दे दिये गये थे।*

उस समय नेहरूजी ने यहां तक धमकी दी थी कि यदि सुभाष *बाबू ने अपनी फौज के साथ, जो वास्तव में जापानी सेना होगी,* भारत में घुसने का प्रयत्न किया तो वह स्वयं तलवार लेकर उनके विरुद्ध युद्ध करेंगे।

इस सिलसिले में नेहरू का १८ दिसम्बर, १९३८ को प्रकाशित एक वक्तव्य इस प्रकार था—"संसार को किसी न किसी रूप में कम्युनिज्म और फासिस्टवाद में से किसी एक का चुनाव करना होगा और उस दशा में मेरी सहानुभूति कम्युनिज्म के साथ होगी। कम्युनिज्म और फासिस्टवाद के बीच का कोई रास्ता नहीं है। इन दोनों में चुनाव करना ही पड़ेगा। मैं कम्युनिस्ट आदर्शों को चुनता हूं। कार्य-प्रणाली और उस आदर्श तक पहुंचने के तरीकों और कट्टरपंथी कम्युनिस्टों द्वारा किए गए सभी कामों से मैं भले ही सहमत न होऊं, मैं समझता हूं कि इन कार्य-प्रणालियों को बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार अपने अनुकूल बनाना होगा और विभिन्न देशों में अपना स्वरूप बदल सकते हैं। पर निश्चय ही कम्युनिज्म की मूलगत विचारधारा और उसके द्वारा की गई ऐतिहासिक व्याख्या बिल्कुल ठीक है, यह मेरा निश्चित मत है।"

जवाहरलाल जी के इस वक्तव्य के विरोध में सुभाष बाबू ने कहा था—"मेरे विचार से जवाहरलाल जी के वक्तव्य में प्रकट की गई विचारधारा गलत है। जबतक कि हम यह न मान लें कि अब हम अन्त तक पहुंच गये हैं तबतक यह मान लेने का कोई कारण नहीं है कि चुनाव केवल उपरोक्त दोनों सीमाओं तक ही सीमित है। चाहे कोई हीगेल या बर्गसी या और ही किसी विकास के सिद्धान्त को माननेवाला हो, हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने की आवश्यकता नहीं कि सृष्टि अब अपने अन्त तक पहुंच गई है। सारी परिस्थितियों पर विचार करते हुए कोई भी यह विश्वास रख सकता है कि इतिहास के बदलने वाले दौर में सम्भव है ससार का इतिहास कम्युनिज्म और फासिज्म का कोई समन्वय पैदा कर दे और यह क्या आश्चर्य की बात होगी कि ऐसा समन्वय भारत में ही पैदा हो? क्या बाद में नेहरूजी ने यही समन्वय पैदा करने की कोशिश नहीं की?"

नेहरू जी के आरोपों के उत्तर में लिखा गया सुभाष का एक विस्तृत पत्र, नेहरू-सुभाष मतभेद के कारणों पर व्यापक प्रकाश डालता है—

प्रिय जवाहर!

मैं ऐसा आभास करता हूं कि इधर कुछ समय से तुम मुझे बहुत नापसन्द करने लगे हो। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हू कि जब कोई बात मेरे विरुद्ध होती है, तुम उसे बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार कर लेते हो।

तुम मेरे राजनैतिक विरोधियों की बातें मान लेते हो और कोई प्रतिवाद नहीं करते।

यह बात मेरे लिए एक अबूझ पहेली बन गई है कि तुम मुझे इतना नापसन्द क्यों करने लगे हो?

जहां तक मेरा सम्बन्ध है, जब से मैं सन् १९३७ में नजरबन्दी

के बाद बाहर आया हूं, मैं तुम्हारा बहुत लिहाज और खयाल रखता आया हूं।

मैंने राजनैतिक दृष्टि से तुम्हें अपना बड़ा भाई और नेता माना है और यथा आवश्यकता तुम्हारी सलाह लेता रहा हूं।

गत वर्ष जब तुम यूरोप से वापस आए थे तो मैंने तुम्हारे पास इलाहाबाद आकर पूछा था कि अब तुम हमें क्या नेतृत्व दोगे?

किन्तु तुम्हारा उत्तर अनिश्चित-सा ही रहा। तुमने मुझे यह कहकर टाल दिया था कि तुम गांधीजी से परामर्श करोगे फिर मुझे बताओगे।

जब हम वर्धा में मिले थे, तब तुम गांधीजी से मिल चुके थे, किन्तु फिर भी तुमने मुझे निश्चित रूप से कुछ नहीं बताया।

बाद को तुमने कार्य-समिति के समक्ष कुछ प्रस्ताव पेश किए, जिसमें न तो *नवीनता थी, न देश के नेतृत्व की रूप-रेखा ही।*

अध्यक्ष-पद के गत चुनाव के पश्चात् एक कटु विवाद छिड़ गया और उस बीच बहुत-सी बातें कही गईं, कुछ मेरे पक्ष में, कुछ मेरे विपक्ष में।

तुम्हारे बयानों में प्रत्येक ओर से मेरे ऊपर आक्षेप था।

दिल्ली के एक भाषण में तुमने कहा कि तुम मेरे पक्ष में हुए चुनाव-प्रचार को पसन्द नहीं करते।

मैं नहीं कह सकता कि तुम्हारे मन में क्या था?

किन्तु तुमने इस तथ्य को बिलकुल ही भुला दिया कि मेरी चुनाव अपील डॉ० पट्टाभि की अपील पत्रों में छपने के बाद ही जारी हुई थी।

जहां तक चुनाव-प्रचार का प्रश्न है, तुमने इस सच्चाई को [illegible]वीकारा कि दूसरे पक्ष का चुनाव-प्रचार कहीं अधिक बड़ा-[illegible] डॉ० पट्टाभि के लिए वोट पाने की कांग्रेस मशीनरी [illegible] उपयोग किया गया। दूसरे पक्ष के पास नियमित संग-

ठन था जिसे तुरन्त गतिमान कर दिया गया।

इसके अतिरिक्त सभी बड़े-बड़े नेता और तुम भी मेरे विरुद्ध थे।

महात्मा गांधी का नाम और प्रतिष्ठा दूसरे पक्ष मे थी—और अधिकतर प्रदेश कांग्रेस कमेटियां उसके हाथों मे थी। उन सबके खिलाफ मेरे पास क्या था ?

मैं अकेला खड़ा था। क्या तुम्हें ज्ञात नही ? कई जगह चुनाव-प्रचार डॉ० पट्टाभि के लिए नहीं, गांधीजी और गांधीवाद के लिए हुआ।

यद्यपि अनेक लोगों ने ऐसे मिथ्या प्रचार के वशीभूत होना स्वीकार नहीं किया।

अब त्यागपत्रो की ही बात ले लो। बारह सदस्यो ने त्याग-पत्र दिए। उन्होंने शिष्ट पत्र द्वारा अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर दी। मेरी बीमारी पर सहानुभूति रखकर, मेरे लिए कटु शब्दो का प्रयोग नही किया किन्तु तुम्हारे बयान के सम्बन्ध में मैं क्या कहू ?

मैं तुम्हारे लिए कटु भाषा का प्रयोग नही करूंगा, किन्तु वह तुम्हारे योग्य नहीं था।

किन्तु तुम्हारे बयान से ऐसा असर पड़ता है कि अन्य बारह सदस्यों की तरह तुमने भी त्यागपत्र दे दिया है। इस समय तक आम जनता के सामने तुम्हारी स्थिति पहेली बनी हुई है।

जब कोई सकट उत्पन्न होता है तो अक्सर तुम इस पक्ष या उस पक्ष मे अपनी राय नहीं बना पाते और परिणाम यह होता है कि जनता को तुम दो घोड़ों पर सवारी करते हुए दिखाई देते हो।

मैं पुनः तुम्हारे २२ फरवरी के वक्तव्य पर आता हूं। तुम्हारा ख्याल है कि तुम जो कहते या करते हो उसमे बहुत ही युक्ति-सगत रहते हो।

किन्तु विभिन्न अवसरो पर तुम्हारे रुख से लोग स्तब्ध और

आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

कुछ उदाहरण और दे रहा हूं।

तुमने अपने २२ फरवरी के वक्तव्य में कहा था कि तुम मेरे द्वारा चुने जाने के विरुद्ध थे। तुमने इसके कारण भी दिए। उन कारणों की २६ जनवरी को अल्मोड़ा से जारी किए गए अपने वक्तव्य में दिए गए कारणों से तुलना करो।

तुमने अपना आधार बदल दिया। मुझसे बम्बई के कुछ मित्रों ने कहा था कि तुमने उनसे पहले कहा कि तुम्हें मेरे अध्यक्ष-पद के लिए खड़े होने में कोई विरोध नहीं है बशर्ते कि मैं वामपक्ष के उम्मीदवार के रूप में खड़ा होऊं।

अल्मोड़ा के बयान को तुमने यह कहकर समाप्त किया कि हमको व्यक्तियों को भुला देना चाहिए। केवल सिद्धान्तों और अपने ध्येय को ही याद रखना चाहिए।

तुम्हे कभी यह खयाल नहीं आया कि व्यक्तियों को भुला देने की बात तुम अभी कहते हो, जब कुछ विशेष व्यक्तियों का सवाल सामने होता है?

जब सुभाष बोस दुबारा चुने जाने के लिए खड़ा होता है तब तुम व्यक्तियों की उपेक्षा करते हो और सिद्धान्तों आदि की दुहाई देते हो।

जब मौलाना आजाद पुनः निर्वाचन के लिए खड़े होते हैं तो तुम्हें लम्बा प्रशसागीत लिखने में कोई संकोच नहीं होता। जब मामला सुभाष बोस और सरदार पटेल तथा दूसरों के बीच होता है तो सबसे पहले सुभाष बोस को अपने व्यक्तिगत प्रश्न का खुलासा करना चाहिए।

जब शरत् बोस त्रिपुरी में कुछ बातों की शिकायत करते हैं, उन लोगों के रवैये और व्यवहार की शिकायत करते हैं, जो अपने को महात्मा गांधी का कट्टर अनुयायी कहते हैं, तो तुम्हारे खयाल

से वह व्यक्तिगत प्रश्नों के स्तर पर उतर आते हैं, बल्कि उन्हें अपने को सिद्धान्तों और कार्यक्रमों तक ही सीमित रखना चाहिए था। मैं स्वीकार करता हूं कि मेरा तुच्छ दिमाग तुम्हारी सगतता को समझने में असमर्थ है।

अब मैं व्यक्तिगत प्रश्न की चर्चा करूंगा। तुम्हारा आरोप है कि मैंने अपने बयानों मे अपने सहयोगियों के प्रति अन्याय किया है। स्पष्टतः तुम उनमें नहीं हो और अगर मैंने कोई आरोप लगाया था तो वह दूसरों के खिलाफ था; अतः तुम अपनी ओर से नहीं, बल्कि दूसरों की वकालत कर रहे हो। एक वकील आमतौर पर अपने मुवक्किल से ज्यादा वाचाल होता है।

असल मे, जब मैं त्रिपुरी में था, कई प्रतिनिधियों ने मुझे बताया (मैं तुम्हें बता दू कि वे मेरे समर्थक नहीं थे) कि 'लाछन वाले मामले' को तो उस समय तक करीब-करीब भुला ही दिया गया था जब तक कि तुमने अपने बयानो और उद्गारो द्वारा इस विवाद को पुनः सजीव नहीं कर दिया और इस बारे में मैं तुम्हे बताऊं कि काग्रेस अध्यक्ष के चुनाव के बाद से कार्य-समिति के बारह भूतपूर्व सदस्यों ने जितना एक साथ मिलकर नही किया, उससे अधिक तुमने मुझे जनता की निगाह मे गिराने के लिए किया है।

अवश्य ही यदि मैं सचमुच इतका दुष्ट हूं तो यह तुम्हारा अधिकार ही नहीं अपितु कर्तव्य भी हो जाता है कि तुम जनता के समक्ष मेरा पर्दाफाश करो।

किन्तु शायद तुमको यह प्रतीत होगा कि जो दुष्ट व्यक्ति तुम्हारे समेत बड़े-से-बड़े नेताओं, महात्मा गांधी और आठ प्रान्तीय सरकारों के विरोध के बावजूद भी अध्यक्ष चुना गया उसमे कुछ तो अच्छाई होगी। उसने अपने अध्यक्षकाल में कुछ तो देश की भलाई और सेवा की होगी कि उसकी पीठ पर कोई संगठन न होने

पर भी और भारी बाधाओं के उपरान्त वह इतने मत प्राप्त कर सका।

तुमने मुझपर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों पर अपनी नीति स्पष्ट न करने का आरोप भी लगाया है।

मेरा खयाल यह है कि मेरी अपनी नीति है, वह गलत अथवा सही हो सकती है।

मैंने त्रिपुरी मे अपने अध्यक्षपदीय भाषण में उसका स्पष्टतः जिक्र किया था।

मेरी दृष्टि में भारत की और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखते हुए हमारे सामने एक ही समस्या है। एक ही कर्तव्य है कि ब्रिटिश सरकार के सामने स्वराज्य का प्रश्न प्रस्तुत करें। इसके साथ-साथ सारे देश मे रियासती जनता के आन्दोलन के पथ-प्रदर्शक की भी एक व्यापक योजना बनानी चाहिए।

मेरा खयाल है कि त्रिपुरी-कांग्रेस के पहले भी मैंने अपने विचारों की स्पष्ट झांकी तुम्हें उस समय दे दी थी जब हम शान्ति-निकेतन में और बाद मे आनन्दभवन में मिले थे।

मैंने अभी-अभी जो लिखा है—वह भी कम-से-कम निश्चित नीति है। अब मैं तुमसे पूछता हूं कि तुम्हारी क्या नीति है?

तुमने हाल के एक पत्र में त्रिपुरी-कांग्रेस द्वारा स्वीकृत राष्ट्रीय मांग-सम्बन्धी प्रस्ताव का जिक्र किया है। तुम उसे काफी महत्त्व देते प्रतीत होते हो।

मुझे खेद है कि एकदम ऐसा अस्पष्ट प्रस्ताव, जिसमें भली लगने वाली सामान्य बातें कही गई हों, मैं पसन्द नहीं कर सकता। वह हमें कहीं भी नही ले जा सकता।

यदि हम स्वराज्य के लिए ब्रिटिश सरकार से लड़ना चाहते हैं और हम अनुभव करते हैं कि उसके लिए उपयुक्त अवसर आ गया है तो हमको ऐसा साफ-साफ कहना चाहिए और आगे कदम

बढ़ाना चाहिए।

तुमने कई बार मुझसे कहा है कि चुनौती देने का विचार तुम्हें जंचता नहीं।

पिछले बीस वर्षों से महात्मा गांधी ब्रिटिश सरकार को बार-बार चुनौतियां देते रहे हैं। इन चुनौतियों और जरूरत पड़ने पर साथ-साथ लड़ाई की तैयारी करने के फलस्वरूप ही वह ब्रिटिश सरकार से इतना कुछ प्राप्त कर सकते हैं। यदि तुम सचमुच यह मानते हो कि राष्ट्रीय मांग को मंगवा लेने का समय आ गया है, तो चुनौती देने के अलावा तुम और कौन-सा रास्ता अपना सकते हो ?

पिछले दिनों महात्मा गांधी ने राजकोट के प्रश्न पर चुनौती दी थी, क्या तुम चुनौती के विचार का इसलिए विरोध करते हो कि मैंने उसे पेश किया है ? अगर यही बात है तो उसे साफ-साफ और बिना किसी लाग-लपेट के क्यों नहीं कहते ?

मैं यह नहीं समझ पाता कि देश की आन्तरिक राजनीति के बारे में तुम्हारी क्या नीति है ?

मुझे स्मरण आता है, तुम्हारे किसी एक बयान में मैंने पढ़ा था *कि तुम्हारे खयाल से राजकोट और जयपुर के सवाल देश के सभी अन्य राजनैतिक प्रश्नों को ढक लेंगे।*

मैं तुम्हारे-जैसे बड़े नेता के मुंह से ऐसे उद्‌गार सुनकर स्तब्ध रह गया।

मैं नहीं समझ सकता कि कोई भी सवाल स्वराज्य के मुख्य सवाल को कैसे ढक सकता है ?

राजकोट इस विशाल देश के भीतर एक छोटा-सा बिन्दु है। जयपुर का क्षेत्र राजकोट से कुछ बड़ा है; किन्तु जयपुर का सवाल भी हमारी ब्रिटिश सरकार के साथ चलने वाली मुख्य लड़ाई की तुलना में चींटी की चटकमात्र है।

फिर हम यह नहीं भूल सकते कि देश में छः सौ से अधिक

रियासतें हैं। अगर हम मौजूदा टुकड़ों में विभक्त प्यादें सजाने वाली और समझौता पसन्द नीति का अनुसरण करते रहेंगे और अन्य राज्यों में लोक-संघर्ष स्थगित कर देंगे तो रियासतों में नागरिक स्वतंत्रता और उत्तरदायी शासन स्थापित करने में हमें ढाई सौ साल लग जायेंगे। उसके बाद हम स्वराज्य की बात सोचेंगे।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में तुम्हारी नीति और भी अधिक पंगु है। कुछ समय पहले जब तुमने कांग्रेस कार्य-समिति के सामने इस आशय का प्रस्ताव पेश किया कि यहूदियों को भारत में बसने दिया जाय तो मैं आश्चर्यचकित रह गया। जब कार्य-समिति ने (शायद महात्मा गांधी की सहमति से) इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया तो तुमको बड़ी चोट लगी। विदेश नीति यथार्थवादी विषय है और उसका निर्धारण मुख्यतः राष्ट्र के हित की दृष्टि से ही होना चाहिए। उदाहरण के लिए रूस को ले लो। अपनी आन्तरिक राजनीति में वह साम्यवाद पोषण करता है किन्तु अपनी विदेशी नीति पर वह कभी भी अपनी भावनाओं को हावी नही होने देता। यही कारण है कि जब उसे अपना फायदा नजर आया तो उसने फ्रांसीसी साम्राज्यवाद के साथ समझौता कर लेने में कोई सकोच नही किया।

फ्रास-रूस समझौता और चेकोस्लोवाक-रूस समझौता इसकी पुष्टि करते हैं। आज भी रूस ब्रिटिश साम्राज्य के साथ समझौता करने के लिए उत्सुक है। अब बताओ, तुम्हारी विदेश-नीति क्या है?

भावनाओं के बुदबुदों और नेक शिष्टाचारों से विदेश-नीति का निर्माण नही होता। हर समय पराजित ध्येयों की वकालत करते रहने तथा एक ओर जर्मनी और इटली-जैसे देशों की निन्दा करने और दूसरी ओर ब्रिटिश और फ्रांसीसी साम्राज्यवाद को सदाचरण का प्रमाण-पत्र देने से कोई काम बनने वाला नही है।

पिछले कुछ समय से तुम्हें और महात्मा गांधी समेत हर

सम्बन्धित व्यक्ति को मैं यह समझाने की कोशिश कर रहा हूं कि हमको अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का भारत के हक में फायदा उठाना चाहिए और इस उद्देश्य से अपनी राष्ट्रीय मांग को एक चुनौती के रूप में ब्रिटिश सरकार के सामने रखना चाहिए। किन्तु मैं तुम्हें या महात्मा गांधी को तनिक भी प्रभावित नहीं कर सका। हालांकि देश की जनता का एक बड़ा भाग मेरे रुख को पसन्द करता है। ग्रेट ब्रिटेन के भारतीय विद्यार्थियों ने अनेक हस्ताक्षरों वाला एक दस्तावेज मुझे भेजा है जिसमें मेरी नीति का समर्थन किया गया है।

आज जब त्रिपुरी प्रस्ताव के बन्धनों के बावजूद कार्य-समिति की तुरन्त नियुक्ति न करने के लिए तुम मुझे दोष देते हो तो अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति अचानक तुम्हारी निगाह में असाधारण महत्त्व धारण कर लेती है। मैं पूछता हूं यूरोप में आज ऐसा क्या हुआ है जो अप्रत्याशित था? क्या अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का प्रत्येक विद्यार्थी यह नहीं जानता था कि बसन्त में यूरोप में संकट पैदा होगा?

जब मैं ब्रिटिश सरकार को चुनौती देने की बात कहता था तो क्या मैंने बार-बार इसका जिक्र नहीं किया था?

अब मैं तुम्हारे बयान के दूसरे हिस्से पर विचार करूंगा।

तुम कहते हो कि 'यह कार्य-समिति फिलहाल तो अस्तित्व में नहीं है और अध्यक्ष, जैसाकि शायद वे चाहते हैं अपना प्रस्ताव तैयार करने और उन्हें कांग्रेस के सामने पेश करने में स्वतंत्र हैं। उनकी इच्छा के अनुसार साधारण काम-काज को निपटाने के लिए भी कोई बैठक नहीं बुलाई गई।'

मुझे आश्चर्य है कि तुम ऐसे अर्द्धसत्य या मैं कहूं, असत्य का आश्रय कैसे ले सकते हो? त्रिपुरी-कांग्रेस के समाप्त होने के सात दिन बाद तुमने मुझे इस आशय का तार भेजा कि कांग्रेस में गतिरोध के लिए मैं ही जिम्मेदार हूं। अपनी समस्त न्याय-भावना के बावजूद तुमने यह अनुभव नहीं किया कि त्रिपुरी-कांग्रेस ने जब पहिल

पन्त का प्रस्ताव पास किया तो वह अच्छी तरह जानती थी कि मैं सख्त बीमार हूं। महात्मा गांधी त्रिपुरी नहीं आये हैं और हम दोनों का निकट भविष्य में मिलना मुश्किल होगा। तुमने यह भी नहीं सोचा कि मेरे हाथों से अवैधानिक और अनियमित रूप से कार्य-समिति नियुक्ति करने का अधिकार छीनकर कांग्रेस ने स्वयं गतिरोध की जिम्मेदारी अपने सिर पर ली है? यदि पं० पन्त के प्रस्ताव ने निष्ठुरतापूर्वक कांग्रेस संविधान की अवहेलना न की होती तो मैंने १३ मार्च, १९३९ को कार्य-समिति को नियुक्त कर दिया होता।

तुमने कांग्रेस के सात दिन बाद ही मेरे विरुद्ध सार्वजनिक आन्दोलन शुरू कर दिया। हालांकि तुम्हें मेरी स्वास्थ्य की दशा का अच्छी तरह पता था और मेरे नाम दिया हुआ तुम्हारा तार मुझे मिलने के पहले ही अखबारों में छप गया। जब त्रिपुरी के पहले पूरे पखवारे कार्य-समिति के बारह सदस्यों के त्यागपत्र देने के कारण कांग्रेस के मामलों में गतिरोध रहा तो क्या तुमने विरोध में एक शब्द भी कहा? क्या तुमने मेरे प्रति एक शब्द भी सहानुभूति में कहा?

इस समय जबकि कई हलकों से मेरे ऊपर अन्यायपूर्ण हमले हो रहे हैं, जैसा कि कहा जाता है कमर से नीचे प्रहार किए जा रहे हैं—तुम विरोध में एक शब्द भी नहीं कहते। तुम्हारा मेरे लिए एक भी शब्द सहानुभूति का नहीं होता है। किन्तु जब मैं आत्मरक्षा में कुछ कहता हूं तो तुम्हारी प्रतिक्रिया होती है—'ऐसे दलीलबाजी वाले बयान अधिक सहायक नहीं होंगे।' क्या तुमने मेरे राजनैतिक विरोधियों के बयानों के भी ऐसे विशेषणों का ही प्रयोग किया है? शायद उनकी तुम सराहना करते होगे?

इस सम्बन्ध में मुझे कहने की इजाजत दो कि ऊपर से हस्तक्षेप करने के मामले में कोई कांग्रेस-अध्यक्ष तुमसे बाजी नहीं मार सकता।

शायद तुम उन बातों को भूल गये जो तुमने कांग्रेस-अध्यक्ष को हैसियत से की है या शायद अपनी ओर विवेचक दृष्टि से देखना मुश्किल होता है ?

२२ फरवरी को तुम मुझपर ऊपर से हस्तक्षेप करने का आरोप लगाते हो। क्या तुम यह भूल गये कि ४ फरवरी को तुमने मुझे एक पत्र लिखा था, जिसमें तुमने मुझपर 'निराग्रही' और 'निष्क्रिय अध्यक्ष' होने का आरोप लगाया ? तुमने लिखा है, 'वस्तुत तुमने निर्देश देने वाले अध्यक्ष की अपेक्षा प्रवक्ता (स्पीकर) की हैसियत अधिक रखी है।'

तुम्हारा यह आरोप सबसे अधिक आपत्तिजनक है कि मैं पक्षपातपूर्ण ढंग से काम कर रहा हूं और किसी खास पार्टी या गुट के प्रति रियायत कर रहा हूं। क्या व्यक्तिश मेरे प्रति नहीं तो कम-से-कम कांग्रेस के अध्यक्ष के प्रति तुम्हारा यह कर्तव्य नहीं था कि उसके विरुद्ध समाचार पत्रों मे ऐसा गम्भीर आरोप लगाने के पहले उचित जांच कर लेते ?

यदि चुनाव-विवाद पर समग्र दृष्टि से कोई विचार करे तो वह यही सोचेगा कि चुनाव का दगल समाप्त हो जाने के बाद यह सारा प्रकरण भुला दिया जायेगा। लड़ाई के अस्त्रों को दफना दिया जायेगा और जैसाकि मुक्केबाजी के दंगल के बाद होता है, मुक्केबाज हसते हुए हाथ मिला लेंगे। किन्तु सत्य और अहिंसा के बावजूद ऐसा नही हुआ। चुनाव परिणाम को खिलाड़ी की भावना से स्वीकार नही किया गया, मेरे विरुद्ध मन मे गांठ बांध ली गई और प्रतिशोध की भावना गतिशील कर दी गई। तुमने कार्य-समिति के अन्य सदस्यों की ओर से शस्त्र ग्रहण किए। तुम्हें ऐसा करने का पूरा अधिकार था किन्तु क्या तुमने यह नहीं सोचा कि कुछ मेरे पक्ष मे भी कहा जा सकता है ? क्या कार्य-समिति के दूसरे सदस्यों के लिए इसमें कुछ अनुचित नहीं था कि मेरी अनुपस्थिति में और मेरी पीठ-

पीछे एकत्र होने और डॉ० पट्टाभि को कांग्रेस की अध्यक्षता के लिए खड़ा करने का फैसला करते?

क्या कांग्रेस के नेताओं और दूसरों के लिए यह अनुचित न था कि कार्य-समिति के सदस्य के नाते कांग्रेस प्रतिनिधियों से डॉ० पट्टाभि का समर्थन करने की अपील करते? क्या चुनाव-कार्य के लिए कांग्रेस नेताओं द्वारा महात्मा गांधी का नाम और उनकी सत्ता का उपयोग करने में कुछ भी अनुचित नहीं था? क्या उन नेता महोदय का यह कहना अनुचित नहीं था कि मेरा दुबारा चुना जाना देश के हित के लिए हानिकारक होगा? क्या विभिन्न प्रान्तों में कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलों का वोट हासिल करने के लिए उपयोग करने में कोई गलती नहीं थी?

जहां तक कथित लाछनों का प्रश्न है, मुझे जो कुछ कहना था, वह मैं अपने अखबारी बयानों में और त्रिपुरी में विषय-समिति के सामने अपने भाषण में पहले ही कह चुका हूं।

तुमने २२ फरवरी के बयान में संगठन के शिखिर पर पारस्परिक सन्देह के वातावरण और विश्वास की कमी की शिकायत की है। क्या मैं तुमसे कहूं कि अध्यक्षीय चुनाव होने तक तुम्हारे कार्यकाल की अपेक्षा मेरे कार्यकाल में कार्य-समिति के सदस्यों में सदेह और विश्वास का अभाव कहीं कम था? उसके फलस्वरूप हमारे त्यागपत्र देने की कभी नौबत नहीं आई।

जैसाकि तुम्हारे ही कथनानुसार तुम्हें एक से अधिक बार करना पड़ा। जहां तक मुझे मालूम है, झगड़ा चुनाव-संघर्ष में मेरी सफलता के बाद से आरम्भ हुआ। यदि मैं हार गया होता तो ज्यादा सम्भव यही था कि जनता को लाछन-प्रकरण के बारे में सुनने को मिलता ही नहीं।

कभी-कभी तुम अपने को समाजवादी 'पक्का समाजवादी' भी कहते हो। मेरी समझ में नहीं आता कि कोई समाजवादी, जैसा-

कि तुम अपने को मानते हो, व्यक्तिवादी कैसे हो सकता है ? एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न होता है ? मेरे लिए यह भी एक पहेली है कि तुम जिस व्यक्तिवाद के समर्थक हो उसके जरिये समाजवाद कभी भी कैसे स्थापित हो सकता है ?

एक और विचार है, जिसका तुम अक्सर राग अलापते हो। उसके बारे मे भी मैं कुछ कहना चाहूंगा। मेरा आशय राष्ट्रीय एकता के विचार से है। मैं भी उस विचार का पूरा समर्थक हू। जैसाकि मैं मानता हूं, सारा देश एक है। किन्तु इसकी एक प्रकट सीमा है। जिस एकता की हम कोशिश करते हैं या कायम रखना चाहते हैं, वह काम करने की एकता होनी चाहिए, हाथ पर हाथ धरकर बैठे रहने की नही।

भारत मे जब 'मोडरेट' (नरम दली) कांग्रेस से अलग हो गये तो किसी भी प्रगतिशील विचारधारा के व्यक्ति ने इस अलहदगी पर अफसोस प्रकट नही किया। उसके बाद जब बहुत-से कांग्रेसी सन् १६२० मे कांग्रेस से हट गये तो शेष कांग्रेसियो ने उनकी जुदाई पर आंसू नहीं बहाये। इस तरह की अलहदगियो से वास्तव मे आगे बढ़ने में मदद मिली।

कुछ समय से हम एकता के अन्धभक्त बन रहे हैं। इसमे खतरा छिपा हुआ है। उसकी कमजोरी को छिपाने के लिए या ऐसे समझौते करने के लिए उपयोग किया जा सकता है, जो बुनियादी तौर पर प्रगति-विरोधी होते हैं। तुम अपना ही उदाहरण ले लो। तुम गांधी-इर्विन समझौते के खिलाफ थे किन्तु तुमने एकता के नाम पर उसे स्वीकार कर लिया। फिर तुम प्रान्तो में मंत्रिपद स्वीकार करने के खिलाफ थे किन्तु जब पद-ग्रहण करने का निश्चय हुआ तो तुमने शायद उसी एकता के नाम पर इस फैसले को मान लिया। दलील की खातिर मान लो कि किसी तरह कांग्रेस का बहुमत संघ-योजना को अमल में लाना स्वीकार कर लेता है, तो

तौर-तरीके कुछ ऐसे थे कि तुम लगभग अध्यक्ष के काम अपने हाथों में ले लेते थे। अवश्य ही मैं तुम्हारी लगाम खींचकर समिति को सम्भाल सकता था, किन्तु उसके फलस्वरूप हमारे बीच खुली दरार पड़ जाती। बहुत साफ-साफ कहूं तो तुम कभी-कभी कार्य-समिति में लाड-प्यार से बिगड़े बेटे की तरह बर्ताव करते थे और अक्सर तुम्हारा पारा चढ जाता था।

*अब बताओ, तुमने अपनी तमाम गरम-मिजाजी और उछल-*कूद से क्या नतीजे हासिल किये ? तुम आमतौर पर घण्टों खड़े रहते और तब आखिर में घुटने टेक देते। सरदार पटेल और दूसरों के पास तुमसे निपटने के लिए एक कुशल तरीका है। वे तुम्हें खूब बोलने देंगे और अन्त में तुमसे कहेंगे, अच्छा प्रस्ताव लिख डालो। एक बार तुमको प्रस्ताव बनाने को दिया कि तुम खुश हो जाओगे, फिर भले वह प्रस्ताव कैसा भी क्यों न हो। मैंने तुम्हें अपने मुद्दे पर आखिर तक डटे रहते शायद ही कभी देखा है।

मुझे आश्चर्य है कि बिना पूरा तथ्य जाने तुमने यह आरोप लगाया है कि मैंने बम्बई श्रमिक-व्वाद विधेयक को उसकी मौजूदा शक्ल में स्वीकृत होने से रोकने की भरसक कोशिश नहीं की। असल में कुछ समय से तथ्यों का पता लगाने की चिन्ता किये बिना तुमने मेरे खिलाफ आरोप लगाने की कला का विकास कर लिया है। अगर तुम जानना चाहते हो कि मैंने इस बारे में क्या किया तो सबसे अच्छी बात यह होगी कि सरदार पटेल से पूछ देखो।

अब तुम अपनी बात ले लो। क्या मैं पूछ सकता हूं कि तुमने इस विधेयक की स्वीकृति को रोकने के लिए क्या किया? जब तुम बम्बई से लौटे तो तुम जरूर कुछ कर सकते थे। मेरे खयाल से कुछ श्रमिक कार्यकर्ता तुमसे मिले थे और उनको तुमने कुछ उम्मीद बधाई थी। मेरी अपेक्षा तुम अच्छी स्थिति में थे, कारण तुम मेरी अपेक्षा कहीं अधिक गांधीजी को प्रभावित कर सकते हो। अगर

तुमने जोर लगाया होता तो जहां मैं विफल रहा, वहां तुम सफल हो सकते थे। क्या तुमने ऐसा किया ?

एक और मामला है जिसके विषय में तुम अक्सर मेरे ऊपर तीर चलाया करते हो। वह है मिला-जुला मंत्रिमंडल बनाने का विचार। सिद्धान्तवादी राजनीतिज्ञ की तरह तुमने हमेशा के लिए यह तय कर दिया कि 'मिला-जुला मंत्रिमंडल दक्षिणपंथी कदम होगा।'

इलाहाबाद में बैठकर ऐसे बुद्धिमत्ता-भरे उद्‌गार प्रकट करने से क्या लाभ जिनका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं ?

सादुल्ला मंत्रिमंडल-पतन के बाद मैं असम गया तो मुझे एक भी ऐसा कांग्रेसी नहीं मिला जो मिला-जुला मंत्रिमंडल बनाने पर जोर न देता हो।

तथ्य यह है कि प्रान्त प्रतिक्रियावादी मंत्रिमंडल के नीचे कराह रहा था। हालत बद-से-बदतर होती जा रही थी और भ्रष्टाचार रोजाना बढ़ता जा रहा था। जब नये मंत्रिमंडल ने पद-ग्रहण किया तो असम की समस्त कांग्रेसी विचार-धारा को मानने वाली जनता ने राहत की सांस ली तथा नये विश्वास और आशा का अनुभव किया। अगर तुम पद-ग्रहण की नीति को सारे ही देश के लिए छोड़ने को तैयार हो तो मैं भी असम और बंगाल-जैसे प्रान्तों के कांग्रेसजनों के साथ-साथ उसका स्वागत करूंगा। किन्तु अगर कांग्रेस-पार्टी सात प्रान्तों में पद-ग्रहण करती है तो यह जरूरी है कि दूसरे प्रान्तों में मिले-जुले मंत्रिमंडल स्थापित हों।

बंगाल के बारे में मुझे भय है कि तुम करीब-करीब कुछ नहीं जानते। अपनी अध्यक्षता के दो वर्षों में तुमने इस प्रान्त का कभी दौरा नहीं किया हालांकि इस प्रान्त को जिस भयंकर दमन में से गुजरना पड़ा, उसे देखते हुए उसकी ओर दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा कहीं अधिक ध्यान देने की जरूरत थी। क्या तुमने कभी

यह मालूम करने की परवाह की कि हक-मंत्रिमंडल के पद-ग्रहण करने के बाद इस प्रान्त में क्या हुआ ? अगर तुमने की होती तो तुम एक सिद्धान्तवादी राजनीतिज्ञ की तरह बात न करते। तब तुम मुझसे सहमत होते कि अगर इस प्रान्त को बचाना हो तो हक-मंत्रिमंडल को खत्म होना चाहिए और मौजूदा परिस्थितियों में सर्वश्रेष्ठ शासन की अर्थात् मिले-जुले मंत्रिमंडल की स्थापना होनी चाहिए।*

जीलगोरा पो० आ०
जिला मानभूमि, बिहार
२८ मार्च, १६३६

[सुभाषचन्द्र बोस]

---

* राष्ट्रवाणी, १९३९ अप्रैल अंक के आधार।

महात्मा गांधी के नाम

आपके नाम और प्रतिष्ठा का वे लोग उपयोग कर रहे हैं, जो हमसे बदला लेना चाहते हैं···आप जानते हैं कि मैं आपका अन्धानुकरण नहीं करता···

आपने लिखा है, भगवान मुझे पथ दिखलाए। महात्मा जी! मैं इन दिनों हर वक्त भगवान से यही प्रार्थना करता हूं कि भगवान मुझे वही रास्ता दिखलाए जो मेरे देश की स्वाधीनता के लिए सर्वोत्तम हो। मेरा विश्वास है कि वह राष्ट्र हमेशा जीवित रहता है, जिसके नागरिक जरूरत पड़ने पर अपने देश के लिए मरने को तैयार रहते हैं।

[सुभाष के पत्रों से]

सुभाष-गांधी पत्राचार

त्रिपुरी-कांग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार महात्मा गांधी के सुझाव पर कांग्रेस कार्यकारिणी गठन एवं कांग्रेस के दोनों खेमों में एकता स्थापित करने के विषय में नेताजी का उनके साथ एक दीर्घ पत्र-व्यवहार हुआ। दोनों वरिष्ठ नेताओं के पत्राचार का कांग्रेस के इतिहास में अपना एक विशिष्ट महत्त्व है।

यह समाचार श्री सुभाष चन्द्र बोस द्वारा १३ मई, १६३६ को (महात्मा गांधी की सहमति पर) समाचार पत्रों में प्रकाशनार्थ दे दिया गया था।

उपर्युक्त समाचार का संक्षिप्त रूपान्तर यहां प्रस्तुत किया जा रहा है :

इस विशद पत्राचार का प्रारम्भ महात्मा गांधी के नाम भेजे गए सुभाष के एक तार से होता है…

जीलगोरा,
२४ मार्च, १६३६

महात्मा गांधी,

बिड़ला हाउस, नई दिल्ली।

कांग्रेस के काम के सम्बन्ध में आपने शरत् को जो सुझाव दिया है उसे और निकट भविष्य में आपसे मिलने की असम्भावना को दृष्टि में रखकर मैं यह आवश्यक समझता हूं कि पत्र के जरिये आपसे सलाह-मशविरा करूं।

[सुभाष]

राष्ट्रपति की हैसियत से सुभाष का पत्र

जीलगोरा,
२५ मार्च, १६३६

आदरणीय महात्मा जी !

कांग्रेस के कार्य को रोक देने का जो लोग मेरे ऊपर इल्जाम लगा रहे हैं, उनके जवाब में मैंने जो वक्तव्य दिया है, आशा है आपने उसे देखा होगा। हमारे सामने सबसे जरूरी और शीघ्र करने का काम कार्यकारिणी का गठन है। उस समस्या के सन्तोषजनक हल के लिए अन्य महत्त्वपूर्ण समस्याओं के सम्बन्ध मे विचार-विमर्श आवश्यक है, फिर भी मैं कार्यकारिणी के गठन को ही पहले लेता हूं।

इस समस्या के सम्बन्ध मे अगर आप निम्नलिखित विषयो पर अपना मत प्रकट करेंगे तो मैं कृतज्ञ होऊंगा।

(१) कार्यकारिणी के गठन के सम्बन्ध में आपकी वर्तमान धारणा क्या है? यह एक मत वालों की होनी चाहिए, या इसमे विभिन्न पार्टियो के व्यक्ति होने चाहिए?

(२) आपका मत हो कि कार्यकारिणी एक मत की हो तो फिर उसमे एक तरफ सरदार पटेल और दूसरी ओर मेरे-जैसे आदमी की गुंजाइश नही है।

(३) अगर आप सहमत हो कि कार्यकारिणी में विभिन्न दलो के लोग हों तो उनकी सख्या कितनी हो? मेरी राय मे कांग्रेस के दो दल या गुट हैं, वे कुछ कम या ज्यादा लगभग बराबर-से हैं। सभापति के चुनाव में बहुमत हमारे साथ था, त्रिपुरी मे दूसरी तरफ। मगर यह कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की वजह से हुआ। अगर सोशलिस्ट

पार्टी निरपेक्ष न रहती तो हमारा बहुमत होता।

(४) मैं सोचता हूं यह व्यवस्था ठीक होगी कि सात नाम मैं पेश करूं और आप सरदार साहब से सात नाम देने को कहें।

(५) अगर मैं सभापति रहूं और ठीक से काम करूं तो यह आवश्यक है कि जनरल सेक्रेटरी मेरी सलाह से हो।

(६) कोषाध्यक्ष का नाम सरदार पटेल पेश कर सकते हैं।

अब मैं पण्डित पन्त के प्रस्ताव के दो Implications का उल्लेख करना चाहता हूं। क्या आप इस प्रस्ताव को मेरे लिए अविश्वास का प्रस्ताव मानते हैं और जिसके परिणामस्वरूप क्या आप मेरा पद-त्याग करना पसन्द करेंगे? यह बात मैं इसलिए कहता हूं कि पन्त-प्रस्ताव का समर्थन करने वालों ने भी अनेक व्याख्याएं की हैं।

दूसरा सवाल यह है कि पंडित पन्त के प्रस्ताव के पास होने के बाद कांग्रेस सभापति की स्थिति दरअसल क्या होती है? कांग्रेस विधान की धारा कार्यकारिणी की नियुक्ति के सम्बन्ध में सभापति को कुछ अधिकार देती है, और विधान की यह धारा अभी तक अपरिवर्तित है। साथ ही पंडित पंत का प्रस्ताव कहता है, मैं आपकी इच्छा के अनुसार कार्यकारिणी बनाऊं। इसका मतलब क्या है? क्या आप अपनी स्वतंत्र इच्छा से कार्यकारिणी के नाम चुनेंगे और मैं सिर्फ उनकी घोषणा कर दूंगा, जिसका अर्थ होगा, विधान की उक्त धारा बिना परिवर्तित किये ही, बेकार कर दी जाय।

इस सम्बन्ध में मैं यह स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि पंडित पंत के प्रस्ताव में यह धारा बिल्कुल अवैधानिक और Uttravires है। दरअसल पंडित पंत का प्रस्ताव ही Out of order था क्योंकि वह बहुत देर से मिला था। यह मेरे अधिकार में था कि मैं पंडित पंत के प्रस्ताव को पेश न होने देता, जैसा कि मौलाना आजाद ने राष्ट्रीय मांग के प्रस्ताव के सम्बन्ध में शरत् बोस के

संशोधन को अस्वीकृत कर दिया था। इसके बाद पंडित पत के प्रस्ताव की अनुमति देने के बाद भी मैं प्रस्ताव के इस भाग को Out of order करार दे सकता था क्योंकि यह काग्रेस विधान की १५वीं धारा के खिलाफ था। लेकिन मैं प्रजातत्रीय भावनाओं की कद्र अधिक करता हू और वैधानिक बातो पर विशेष जोर नहीं देता। मैंने सोचा, जब विरोधी मत की सम्भावना है तब विधान की शरण लेना अमानवीय होगा।

पत्र समाप्त करने के पहले मैं एक और विषय का उल्लेख करना चाहता हूं। तमाम दिक्कतो, अड़चनो और कठिनाइयो के रहते हुए भी अगर मुझे सभापति-पद पर बने रहना है तो आप किस तरह मेरा काम करना पसन्द करेंगे ? मुझे याद है कि आपने पिछले बारह महीनो मे अक्सर मुझे सलाह दी है कि आप नही चाहते कि 'डमी' सभापति रहूं। आप यह पसन्द करेंगे कि मैं अपने मत पर जोर दू। १५ फरवरी को जब मैंने देखा कि आप मेरे कार्यक्रम से सहमत नही हैं, मैंने कहा था, मेरे सामने दो रास्ते हैं, या तो अपने को दबाऊं या अपनी धारणाओं के अनुसार काम करू। आपने कहा था, *अगर मैं अपने मत को अपनी मर्जी से नहीं मान सकूं तो मुझे अपने* को दबाना नही चाहिए। अगर मैं सभापति रहू तो क्या आप पिछले साल की तरह सलाह देंगे कि मैं 'Dummy' सभापति नही रहूं ? जो कुछ भी मैंने कहा है उसका अभिप्राय है कि जो कुछ हो गया है उसके बाद भी यह सम्भव है कि काग्रेस के सब दल मिलकर काम करें ? दूसरे पत्र मे मैं साधारण समस्याओं के सम्बन्ध में मिलूगा जिनका मैंने अपने वक्तव्य मे जिक्र किया है।

मेरा स्वास्थ्य धीरे-धीरे ठीक हो रहा है। अच्छा होने में प्रधानबाधी पूरी नींद का न आना मालूम होता है। प्रणाम।

आपका

सुभाष

गांधी जी का उत्तर

बिड़ला हाउस,
नई दिल्ली, २४ मार्च, १९३९

प्रिय सुभाष !

आशा है, स्वास्थ्य ठीक हो रहा होगा। मैं शरत् के पत्र की प्रतिलिपि और अपने उत्तर की नकल भेज रहा हूं। अगर यह पत्र तुम्हारे भावों का प्रतिनिधित्व करता हो तो मेरे सुझाव लागू हैं। किसी भी तरह केन्द्र में जो अराज्य फैल रहा है उसका अन्त होना चाहिए। तुम्हारे अनुरोध के अनुसार मैं बिल्कुल चुप हूं, गोकि मेरे ऊपर दवाव डाला जा रहा है कि मैं इस विषय में अपनी राय प्रकट करूं।

मैंने सर्वप्रथम इलाहाबाद मे प्रस्ताव देखा। यह मुझे बिल्कुल साफ मालूम होता है। कुछ करना तुम्हारे हाथ में है। मैं नहीं जानता राष्ट्रीय कार्य करने के लिए तुम्हारा स्वास्थ्य कितना उपयुक्त है। अगर स्वास्थ्य ठीक न हो तो मेरा ख़याल है जो वैधानिक रास्ता है, वही तुम स्वीकार करोगे। मैं कुछ दिन दिल्ली मे और रहूंगा।

[बापू]

सुभाष बाबू का गांधीजी को तार

पत्र की प्रतीक्षा में हूं, जैसाकि वक्तव्य है, हमारा मिलना वांछनीय है।

[सुभाष]

⊙

महात्माजी द्वारा तार का उत्तर

राजकोट का मामला मुझे दिल्ली में अटकाये हुए है अन्यथा मैं कमजोर होते हुए भी रवाना हो जाता। तुम यहां आकर मेरे पास रहो, मैं तुम्हें स्वस्थ करने का जिम्मा लेता हूं, साथ ही हम लोग विमर्श भी करते रहेंगे।

[बापू]

⊙

महात्माजी के तार का डॉक्टर सुनील बोस द्वारा उत्तर

उनकी (सुभाष) हालत ऐसी है कि बिस्तर पर पड़े रहते हैं, यात्रा करने लायक अवस्था बिल्कुल नहीं है। अगर वर्तमान चिकित्सा जारी रही तो तीन सप्ताह मे चंगे हो जाएंगे। डाक्टर की हैसियत से मेरी राय है कि विशेष विषयों पर ही पत्र व्यवहार करें, बाकी की समस्याएं इस वक्त छोड़ दें। क्षमा करेंगे।

आपका
सुनील बोस

राष्ट्रपति सुभाषबोस ने गांधीजी को निम्न पत्र लिखा

जीलगोरा,
मार्च २६

आदरणीय महात्मा जी !

मैं दो-एक दिन मे लिखने ही वाला था कि कांग्रेस के स्थानापन्न मंत्री श्री नरसिंह ने लिखा है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के लिए *लगभग २० दिन का नोटिस होना चाहिए । नियमों* के अनुसार सदस्यों को १५ दिन का नोटिस अवश्य मिलना चाहिए । सब जगह पहुंचने के लिए ४-५ दिन चाहिए ।

अगर आप सहमत हों तो मैं समझता हूं २० अप्रैल के लगभग की तारीख ठीक होगी । लेकिन एक दिक्कत है, गांधी-सेवा-संघ की कान्फ्रेंस २० तारीख को होने वाली है । अखिल भारतीय कांग्रेस और कार्यकारिणी की बैठक कलकता में होगी । उस समय आपकी *उपस्थिति आवश्यक है । तब क्या अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी* की बैठक गांधी-सेवा-संघ कान्फ्रेंस के पहले या बाद हो ? पहले होने से आप कलकत्ता आकर वहां से बिहार जा सकते हैं, बाद में होने से बिहार से कलकत्ता आ सकते हैं । पहली हालत में कान्फ्रेंस को एक सप्ताह के लिए स्थगित करना होगा, दूसरी हालत में कांग्रेस की बैठक अप्रैल के अन्त में करनी होगी ।

कृपया इस विषय पर अपना विचार दीजिए कि अखिल भारतीय

-कांग्रेस कमेटी की बैठक कब हो। उस समय आपका होना अनिवार्य है।

मेरी तबीयत सुधर रही है। यह जानकर चिन्ता हुई कि आप का ब्लड प्रेशर फिर चढ़ गया। आप बहुत काम करते हैं। प्रणाम।

आपका
सुभाष

दूसरा पत्र

आदरणीय महात्माजी !

मुझे २४ तारीख की ट्रेन से लिखा हुआ पत्र प्रतिलिपियों के साथ मिला। पहली बात तो यह है कि मेरे भाई शरत् ने अपने मन से आपको लिखा। पत्र से मालूम होता है कि उन्हें यहाँ से जाने के बाद आपका तार मिला और तब उन्होंने आपको लिखा। अगर आपका तार न मिला होता तो शायद वे न लिखते।

उनके पत्र में कुछ बातें मेरी भावनाओं के अनुकूल हैं, लेकिन यह कोई बात नहीं है, मेरी दृष्टि में महत्वपूर्ण सवाल यह है कि क्या दोनों दल भूत के मतभेद को भूलकर एक साथ काम कर सकते हैं ? यह बिलकुल आप पर निर्भर करता है। अगर आप निष्पक्ष रुख अख्तियार कर दोनों दलों का विश्वास प्राप्त कर लें, तो आप कांग्रेस की रक्षा कर सकते हैं और राष्ट्रीय एकता फिर स्थापित कर सकते हैं।

दूसरी बात यह है कि मैं पन्त-प्रस्ताव को कांग्रेस द्वारा पास किया मानता हूं और हमें उसके अनुसार चलना चाहिए। मैंने खुद ही प्रस्ताव पेश होने दिया और उसपर बहस होने दी, यद्यपि उसकी एक धारा Ultravires थी।

तीसरी बात यह है कि आपके सामने दो तरीके हैं—(१) या तो कार्यकारिणी के गठन के सम्बन्ध में हमारी राय को स्थान दीजिए, (२) या अपनी राय पर ही पूर्ण रूप से जोर दीजिए। अन्तिम हालत में हम दोनों विभिन्न रास्तों पर चले जायेंगे।

चौथी बात यह है कि नई कार्यकारिणी के गठन और अखिल

भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक के लिए मैं, जो सम्भव है, वह सब करने के लिए तैयार हूं, लेकिन इस समय दिल्ली आना सभव नही है।

पांचवी बात—आपके पत्र मे यह पढकर मुझे आश्चर्य हुआ कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने आपको पन्त-प्रस्ताव की कापी नही भेजी। मुझे और भी ताज्जुब हुआ कि इलाहाबाद के पहले आपको प्रस्ताव नहीं दिखलाया गया। त्रिपुरी मे यह अफवाह जोरों पर थी कि प्रस्ताव पर आपकी पूर्ण रजामदी है। जब हम त्रिपुरी मे थे तब इस आशय का एक वक्तव्य भी निकला था।

छठी बात—मेरी पद पर जमे रहने की जरा भी इच्छा नहीं है किन्तु मैं बीमार हू इसलिए इस्तीफा दे दूं, इसकी मैं कोई वजह नही समझता। उदाहरणतः जेल मे स्वास्थ्य रहते हुए भी किसी सभापति ने इस्तीफा नही दिया। मेरे ऊपर इस्तीफा देने के लिए बहुत जोर डाला जा रहा है। मैं इसका प्रतिरोध कर रहा हू क्योंकि मेरा इस्तीफा कांग्रेस की राजनीति मे नया अध्याय आरम्भ कर देगा जिसे मैं टालना चाहता हूं। पिछले कुछ दिनों से कांग्रेस का आवश्यक कार्य कर रहा हूं, दो-एक दिन में फिर लिखूगा। प्रणाम। यह आपके पत्र का जवाब नही है, मैंने सिर्फ प्वाइंट लिख दिए हैं।

आपका

सुभाष

गांधीजी द्वारा उत्तर

नई दिल्ली,
३० मार्च, १९३९

प्रिय सुभाष !

मैंने तुम्हारे २५ तारीख के उत्तर में, अपने तार के जवाब की आशा में देर की। सुनील का तार कल मिला। प्रातः प्रार्थना के पहले मैं पत्र लिखने के लिए उठा हूं।

जबकि तुम समझते हो पंडित पन्त का प्रस्ताव अनियमित और कार्यकारिणी-सम्बन्धी उसका भाग Ultravires था, तो तुम्हारा रास्ता बिल्कुल साफ है। कार्यकारिणी के चुनाव में कोई दखल न होना चाहिए। *इसलिए इससे सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर आवश्यक* नहीं।

फरवरी में मिलने के बाद से यह धारणा दृढ़ हो गई है कि जहां पर सिद्धान्तों के सम्बन्ध में मतभेद है, जैसाकि हम मान चुके हैं कि ऐसी अवस्था में निश्चित केबिनेट हानिकर होगा। यह मानकर कि तुम्हारी पालिसी के पीछे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का बहुमत है, तुम्हारी कार्यकारिणी बिल्कुल उनकी होनी चाहिए, जिनका तुम्हारी नीति में विश्वास हो।

मैंने फरवरी में जो राय जाहिर की थी उसी पर कायम हूं, अगर तुमको कांग्रेस के सभापति की हैसियत से काम करना है, तो तुम्हारे हाथ खुले होने चाहिएं। जहां तक Gandhites (to use that wrong expression) का सम्बन्ध है, वे तुम्हारे रास्ते में रुकावट नहीं डालेंगे, जहां मुमकिन होगा मदद करेंगे, जहां नहीं

होगा अनुपस्थित रहेंगे। अगर वे अल्पमत हैं तो कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए और अगर वे बहुमत में हैं तो मुमकिन है अपने-आपको न दबाएं। मुझे चिन्ता इस बात की है कि कांग्रेस (Electorate) बोगस है और इसलिए अल्प और बहुमत का पूरा मतलब खपत हो जाता है। जब तक कांग्रेस में कोई असल बात साफ नहीं होती, हमें उसी से काम चलाना पड़ेगा जो कि हमारे पास है। चिन्ता की दूसरी बात आपस का अविश्वास है। जहां कार्यकर्ता एक-दूसरे का विश्वास नहीं करते वहां संयुक्त कार्य असंभव है।

मेरे खयाल से हमारा पत्र-व्यवहार छपना नहीं चाहिए, पर तुम्हारा विचार भिन्न हो तो मेरी अनुमति है।

[बापू]

⊙

नई दिल्ली,
३१ मार्च, १९३९

पत्र मिला, पहले पत्र का जवाब कल भेजा है। दूसरी धारा के अनुसार सात दिन का नोटिस देकर आवश्यक बैठक बुलाई जा सकती है।

[बापू]

⊙

जीलगोरा,
३१ मार्च, १९३९

तार मिला, स्वास्थ्य की दृष्टि से २० अप्रैल के बाद कोई भी तारीख हो। अखिल भारतीय कांग्रेस के पहले कार्यकारिणी की बैठक

होगी। कांग्रेस के पहले गांधी-सेवा-संघ की कान्फ्रेंस होने में कोई आपत्ति नहीं है, बल्कि उत्तम है। तारीख के सम्बन्ध में आपकी इच्छा के अनुसार ही होगा। प्रणाम।

सुभाष

⊙

नई दिल्ली,
१ अप्रैल, १९३९

तार मिला, जो सुविधाजनक हो तारीख निश्चत करो, मैं उसी के अनुसार कर लूंगा।

[बापू]

महात्माजी के नाम सुभाष बाबू का पत्र

जीलगोरा,
३१ मार्च, १६३६

आदरणीय महात्मा जी !

सुनील ने मेरे स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे जो तार दिया था उसका आपने जो उत्तर दिया उसे मैंने देखा। जब आपने मुझे दिल्ली आने के लिए तार दिया था, तब मैंने यही ठीक समझा कि इस विषय मे डाक्टर की स्पष्ट राय ही उपयुक्त होगी। इसलिए सुनील ने आपको तार दिया।

मैं आपके २४ तारीख के ट्रेन मे लिखे गए पत्र और उसी दिन शरत् को लिखे गये पत्र के विभिन्न भागों पर विचार कर रहा हूं। यह दरअसल दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसे संगीन मौके पर मैं बीमार पड़ गया। लेकिन घटनाएं एक के बाद एक इतनी तेजी से घटी कि मुझे स्वास्थ्य होने का मौका नही मिला। इसके सिवा त्रिपुरी और इसके बाद भी कुछ कांग्रेसी हल्कों द्वारा मेरे साथ जैसा व्यवहार किया जाना चाहिए था, नही किया गया। इसमे आप शामिल नही हैं। लेकिन बीमारी के कारण पद-त्याग का कोई सवाल नहीं है। जैसा-कि मैंने पहले पत्र मे लिखा है जेल में काफी समय तक रहने पर भी किसी सभापति ने इस्तीफा नहीं दिया। यह हो सकता है कि आखिरकार मुझे इस्तीफा देना पड़े किन्तु उसके कारण बिल्कुल भिन्न होंगे। मैंने कहा है, पद-त्याग के लिए दबाव पडने पर भी मैंने प्रतिरोध किया है। मेरे पद-त्याग का अर्थ कांग्रेस के इतिहास

में नये अध्याय की सृष्टि होगी, जिसे मैं आखिर तक टालना चाहता हूं। अगर हम अलग हो जाएंगे तो आपस में लड़ाई होने लगेगी और कुछ काल के लिए कांग्रेस कमजोर हो जाएगी और इसका फायदा ब्रिटिश सरकार उठाएगी। कांग्रेस और देश को इस अवस्था से बचाना आपके हाथ में है क्योंकि जो लोग विभिन्न कारणों से सरदार पटेल और उनके दल के सख्त खिलाफ हैं वे भी आपमें विश्वास करते हैं और यकीन करते हैं कि आप निष्पक्ष भाव से किसी भी वस्तु का निर्णय कर सकते हैं। उनकी दृष्टि में आप दल या गुटबन्दी से परे हैं, इसलिए आप दोनों लड़ाकू पक्षों में एकता स्थापित कर सकते हैं।

अगर किसी भी कारण से उस विश्वास की जड़ हिल गई और आप भी किसी एक पक्ष के समझे जाने लगे तो हमारी और कांग्रेस की भगवान ही रक्षा करेगा।

इसमें कोई शक नहीं कि आज कांग्रेस के दो दलों या गुटों में काफी फासला है, लेकिन आप उस फासले को मिटा सकते हैं। मैं आपके राजनैतिक विरोधियों के बारे में कुछ नहीं कह सकता किन्तु त्रिपुरी में हमें उसका काफी कटु अनुभव हुआ है, फिर भी मैं अपने पक्ष की तरफ से बोल सकता हूं। हम, जो कुछ हुआ, उसे भूल जाने और हाथ मिलाने के लिए तैयार हैं। जब मैं अपने पक्ष की बात कहता हूं तब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी को बाद दे देता हूं, फिर भी नेताओं को छोड़कर अन्य समाजवादी हमारा साथ देंगे। अगर आपको इस विषय में कोई संदेह है तो कुछ रोज ठहरिए और देखिए क्या होता है। श्री शरत् ने आपको जो पत्र लिखा उससे मालूम होता है वे बहुत कटु हो गए हैं। इसका कारण त्रिपुरी का अनुभव है। वे त्रिपुरी के सम्बन्ध में मुझसे ज्यादा जानते हैं। बिस्तर पर पड़े रहने पर भी मुझे बहुत-सी बातों का पता लगता रहता था। जिस समय मैंने त्रिपुरी छोड़ी उस समय मैं कांग्रेस की राज-

नीति से इतना ऊब गया था जितना पिछले उन्नीस वर्षों में कभी नहीं हुआ। भगवान् की कृपा से मैंने अब अपनी भावना को संयत कर लिया है।

जवाहर ने अपने एक पत्र में (सम्भवतः प्रेस वक्तव्य में) कहा है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का काम मेरे सभापतित्व में बिगड़ गया। शायद उन्होंने नहीं सोचा कि मेरी निन्दा करने के प्रयास में वे कृपलानी जी और सारे स्टाफ की निन्दा कर गए। आफिस जनरल सेक्रेटरी और स्टाफ के हाथ में है, अगर वह बिगड़ जाता है तो उसकी जिम्मेदारी जनरल सेक्रेटरी और स्टाफ की है। मैं यह इसलिए कह रहा हूं चूंकि आपने शरत् के पत्र में चर्चा की है। इस विषय को सुधारने का एकमात्र रास्ता स्थायी सेक्रेटरी की नियुक्ति है, चाहे कार्यकारिणी की नियुक्ति में देर भले ही हो। लेकिन कार्यकारिणी की नियुक्ति जल्दी ही होने वाली हो तो जनरल सेक्रेटरी को पहले से नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

मैं कृतज्ञ होऊंगा अगर आप पंत-प्रस्ताव के सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया से मुझे अवगत कराएं। आप निष्पक्ष भाव से स्थिति को देख सकते हैं, बशर्ते कि आपको त्रिपुरी की पूरी कहानी मालूम हो जाय। पत्रों से मालूम होता है, ज्यादातर उन्हीं लोगों ने आपसे मुलाकात की है जिन्होंने पंत-प्रस्ताव का समर्थन किया था। लेकिन आप वास्तविकता समझ सकते हैं।

पंत-प्रस्ताव के सम्बन्ध में मेरी भावना का अनुमान आप सहज ही कर सकते हैं किन्तु मेरी भावना का कोई सवाल नहीं है, सार्वजनिक जीवन में हमें जनता का खयाल कर व्यक्तिगत भावना दबानी पड़ती है। जैसाकि मैं पहले पत्र में लिख चुका हूं कि वैधानिक दृष्टि से बना प्रस्ताव के सम्बन्ध में कोई कुछ भी कहे, चूंकि यह कांग्रेस द्वारा पास हो गया है, मैं इससे बाध्य हूं। क्या आप समझते हैं, प्रस्ताव मेरे अन्दर अविश्वास का है और मुझे इस्तीफा देना

चाहिए ? इस विषय से आपकी राय का मेरे ऊपर काफी प्रभाव पड़ेगा।

शायद आपको मालूम होगा कि त्रिपुरी में प्रस्ताव के समर्थकों द्वारा कहा जाता रहा कि राजकोट में आपसे टेलीफोन द्वारा बात हुई है और आपने प्रस्ताव का पूर्ण समर्थन किया है। इस तरह का समाचार दैनिक पत्र में भी छपा था। व्यक्तिगत बातचीत में यह भी कहा गया कि इस प्रस्ताव से कम-से-कम आप या आपके दल वालों को संतोष नहीं होगा। मैं व्यक्तिगत रूप से ऐसी खबरों पर विश्वास नहीं करता, फिर भी वोटरों पर इस प्रस्ताव का प्रभाव पड़ता है। जब सरदार पटेल ने मुझे पंत-प्रस्ताव दिखलाया तब मैंने मौलाना आजाद और राजेन्द्र बाबू की उपस्थिति में कुछ परिवर्तन सुझाए और कहा कि संशोधित रूप में प्रस्ताव एक मत से पास हो जाएगा, लेकिन इसका कोई उत्तर नहीं मिला। शायद वे एक कामा भी बदलना नहीं चाहते थे। उम्मीद है, राजकुमारी अमृत कौर ने आपको परिवर्तित प्रस्ताव दिखलाया होगा। अगर पंत-प्रस्ताव का उद्देश्य आपके नेतृत्व, निर्देश और सिद्धान्तों पर विश्वास प्रकट करना है तो वह उसमें है, लेकिन प्रस्ताव का उद्देश्य सभापति के चुनाव के परिणाम का बदला लेना हो तो यह नहीं है। मैं नहीं समझता पंत-प्रस्ताव आपकी प्रतिष्ठा और प्रभाव कैसे बढ़ाता है? विषय-समिति में आपके खिलाफ ४५ वोट आए और कांग्रेस सोशलिस्टों के निरपेक्ष रहने पर भी २२०० में कम-से-कम ८०० वोट खुले अधिवेशन में आपके खिलाफ थे। अगर कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी भी वोट देती तो प्रस्ताव गिर जाता। जरा से परिवर्तन से आपके खिलाफ एक वोट भी नहीं जाता, सब कांग्रेसी आपके नेतृत्व का समर्थन करते। मगर आपके नाम और प्रतिष्ठा का वे लोग उपयोग कर रहे हैं जो हमसे बदला लेना चाहते हैं। दुनिया जानती है त्रिपुरी में आप या आपके अनुयायियों ने बहुमत प्राप्त कर लिया फिर भी

उनके विरुद्ध शक्तिशाली दल है। अगर मतभेद बना रहने दिया गया तो इस विरोधी दल की शक्ति बहुत बढ़ जाएगी। उस दल या पार्टी का भविष्य क्या होगा जो क्रान्तिकारी, युवा प्रगतिशील उपकरणों से युक्त नहीं है? ब्रिटेन की लिबरल पार्टी-जैसा ही उसका भविष्य है।

पंत-प्रस्ताव-सम्बन्धी अपनी प्रतिक्रिया से अवगत कराने के लिए मैंने काफी लिखा है, कृपया अपनी प्रतिक्रिया से अवगत कराइए। क्या आप उसे पसन्द करते हैं?

कार्यक्रम के सम्बन्ध में मैंने १५ फरवरी को अपनी धारणा आपको बतलाई थी, इसके बाद जो घटनाएं घटी हैं, उनसे मेरी भविष्यवाणी का ही समर्थन होता है। मैं महीनों पहले से कहता आ रहा हूं कि यूरोप पर जाड़े के दिनों में संकट आएगा और गर्मियों तक रहेगा। संसार की और अपने देश की परिस्थिति ने आठ महीने पहले मुझे विश्वास दिला दिया था कि पूर्ण स्वराज्य के प्रश्न पर जोर देने का वक्त आ गया। हमारा और देश का दुर्भाग्य है कि आप हमारी आशावादिता में शामिल नहीं हैं। आप कांग्रेस की आन्तरिक विशृंखला से द्रवित हैं। मैं नहीं समझता पहले से इस समय कांग्रेस में अनाचार अधिक है और हिंसा के सम्बन्ध में बंगाल, पंजाब, युक्त प्रांत संगठित क्रान्तिकारी हिंसा के घर समझे जाते थे किन्तु इन प्रान्तों मे इस समय अहिंसा की भावना पहले से अधिक है। बंगाल के सम्बन्ध मे मैं अधिकारपूर्वक कह सकता हूं कि बंगाल आज जितना अहिंसापरायण है, तीस वर्षों में कभी न था। इस और अन्यान्य कारणों से हमें ब्रिटिश सरकार के सामने अल्टीमेटम के रूप में अपनी मांग रखने में वक्त नहीं खोना चाहिए। अल्टीमेटम का विचार आपको और पंडित जवाहरलाल को पसन्द नही आता। लेकिन आपने अपने सार्वजनिक जीवन में अधिकारियों को अन्य गठित अल्टीमेटम दिए हैं और सार्वजनिक कार्य आगे बढ़ाया है।

तौर से यह न कहें।

अन्त मे मैं यह कहना चाहता हूं कि मेरे-जैसे बहुत-से आदमी राजकोट के समझौते पर उत्साह नही दिखला सकते। हम और राष्ट्रीय पत्रों ने इसे महान विजय कहा है।

हम ब्रिटिश सरकार के साथ समझौता कर सकते हैं, लेकिन ऐसे समझौते से हमें क्या मिलेगा ? बहुत-से लोग नही समझते कि वायसराय से मिलने के बाद भी आप दिल्ली मे क्यों हैं ? शायद आराम के लिए यह आवश्यक हो किन्तु ब्रिटिश सरकार और उसके समर्थकों को ऐसा लग सकता है कि आप फेडरल चीफ जस्टिस को बहुत महत्त्व देकर उनकी प्रतिष्ठा बढा रहे हैं।

मेरा पत्र बहुत लम्बा हो गया, अगर कोई बात भ्रमात्मक लगे तो क्षमा कीजियेगा। प्रणाम।

आपका

सुभाष

⊙

जलीगोरा,

१ अप्रैल, १९३९

महात्मा गाधी,

दिल्ली।

क्या कार्यकारिणी को २८ और काग्रेस को ३० तारीख घोषित कर दूं ?—प्रणाम।

आपका

सुभाष

महात्मा गांधी का पत्र

बिड़ला हाउस, नई दिल्ली,
२ अप्रैल, १९३९

प्रिय सुभाष !

३१ मार्च और उसके पहले का पत्र मिला। तुमने बिल्कुल साफ-साफ अपनी राय प्रकट की, जिसकी मैं तारीफ करता हूं। जो राय जाहिर की गई है, वे मेरी और अन्यों की राय से इतनी भिन्न है कि उनका फासला दूर करना असम्भव है। मेरी राय है कि दोनों दलों को अपने विचार बिना मिलावट के देश के सामने रखने चाहिएं और ऐसा अगर किया जाय तो मैं कोई कारण नहीं देखता कि आपसी कटुता बढ़ेगी जिसका परिणाम घरेलू युद्ध होगा।

हमारा आपसी मतभेद खराब नहीं है, बल्कि पारस्परिक श्रद्धा और विश्वास का अभाव खराब है। यह समय द्वारा ही मिटेगा जो कि सर्वोत्तम दवा है। अगर हमारे अन्दर वास्तविक अहिंसा है तो घरेलू युद्ध नहीं होगा, आपसी कटुता तो और भी कम होनी चाहिए।

सब बातों पर सोच-विचार करते हुए मेरी यह निश्चित राय है कि तुमको अपने विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाली कार्यकारिणी का चौगठ निर्माण करना चाहिये, और अपना कार्यक्रम तैयार कर, ए० आई० सी० सी० के सामने रखना चाहिए। अगर ... कर ले तो सब काम ठीक हो जाएगा और तुम ... बिना अपनी योजना कार्यान्वित कर ... न हो तो इस्तीफा देना चाहिए

-और कमेटी को अपना सभापति चुनने देना चाहिए। तब तुम अपने अनुसार देश को तैयार करने को स्वतन्त्र हो जाओगे। मैं यह सलाह पंडित पन्त के प्रस्ताव को अलग रखकर दे रहा हूं।

जिस समय पंडित पन्त का प्रस्ताव तैयार हुआ, मैं बिस्तर पर पड़ा था। मथुरादास, जो उस दिन राजकोट में थे, उन्होंने एक दिन सवेरे यह खबर लाकर दी कि पुराने लोगों में विश्वास प्रकट करने वाला एक प्रस्ताव त्रिपुरी में पेश किया जायेगा। मैंने कहा ठीक है। सेगांव में मुझसे कहा गया था, तुम्हारा चुनाव जितना विश्वास तुममे प्रकट नहीं करता उतना पुराने लोगों में—खासकर सरदार में—अविश्वास प्रकट करता है। उस समय मैंने प्रस्ताव देखा नहीं था। यह मैंने तब देखा, जब मैं इलाहाबाद में मौलाना साहब से मिलने गया।

मेरी प्रतिष्ठा का सवाल नहीं है। इसकी अपनी अलग कीमत है। जब मेरे अभिप्राय पर शंका की जाती है, मेरी नीति या कार्य-क्रम देश अस्वीकृत करता है तो प्रतिष्ठा को जाना ही चाहिए। भारत का उत्थान व पतन उसकी करोड़ों सन्तानों के गुणावगुणों के कारण होगा। व्यक्ति वे चाहे जितने ऊंचे हों, किसी गिनती के नहीं हैं, जब तक कि वे करोड़ों का प्रतिनिधित्व नहीं करते। इसलिए हमे इसपर विचार नहीं करना चाहिए।

मैं इस राय से बिल्कुल सहमत नहीं हूं कि देश इतना अहिंसक कभी न था, जितना आज है। मैं जिस हवा में सांस लेता हूं उसमें हिंसा पाता हूं। हमारा पारस्परिक अविश्वास हिंसा का बुरा रूप है। हिन्दू और मुसलमानों का एक-दूसरे से अलग होना भी यही साबित करता है। मैं और भी बहुत-से उदाहरण दे सकता हूं।

कांग्रेस के अन्तर्गत अनाचार के सम्बन्ध में भी हमारे अन्दर मत-वैभिन्न है, मेरा खयाल है अनाचार बढ़ रहा है। इस परिस्थिति

मैं भी अहिंसात्मक जन-आन्दोलन के लायक वातावरण नहीं देखता। बिना जन-बल के अल्टीमेटम बेकार है।

लेकिन जैसाकि मैंने कहा, मैं बूढ़ा आदमी हूं, शायद अति-रिक्त सावधान हो रहा हूं और तुम्हारे सामने जवानी है और जवानी से उत्पन्न लापरवाह आशावादिता है। मैं आशा करता हूं कि तुम ठीक और मैं गलत हूं। मेरा दृढ़ मत है कि आज की कांग्रेस कार्य नहीं कर सकती, सविनय अवज्ञा आन्दोलन नहीं चला सकती।

मुझे प्रसन्नता है कि तुमने छोटे-से राजकोट के मामले का उल्लेख किया। इससे प्रकट होता है कि हम एक ही चीज को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखते हैं। मैंने राजकोट के लिए अन्य रियासतों में भद्र अवज्ञा आन्दोलन स्थगित नहीं किया। लेकिन राजकोट ने मेरी आंखें खोल दीं, उसने मुझे रास्ता दिखलाया। मैं दिल्ली में स्वास्थ्य-लाभ के लिए नहीं हू, मैं चीफ जस्टिस के फैसले का इन्तजार कर रहा हूं। अगर मैंने Paramount Power से अपना कर्तव्यपालन करने के लिए कहा तो कोई जोखिम नहीं उठाई। मुझे दिल्ली मे रहना ही चाहिये ताकि कर्तव्य पूरी तरह से निभाया जाय।

यद्यपि हमने अपने तीव्र मतभेदो पर विचार-विनिमय किया, किन्तु मुझे विश्वास है कि इससे हमारे व्यक्तिगत सम्बन्ध पर जरा भी प्रभाव न पड़ेगा। अगर हमारे सम्बन्ध हार्दिक हैं—जैसाकि मैं विश्वास करता हूं कि हैं—तो वे मतभेद बर्दाश्त कर लेंगे। शेष पुनः।

तुम्हारा
बापू

तार

नई दिल्ली,
२ अप्रैल, १९३९

पत्रों का पूरा जवाब भेज दिया। मेरी सलाह पन्त-प्रस्ताव के अतिरिक्त है। तुमको अपनी राय का प्रतिनिधित्व करने वाली कार्यकारिणी का गठन करना चाहिए। अपनी नीति और कार्य-क्रम बनाकर A.I.C.C. के सामने पेश करो। अगर बहुमत पाओ तो अपने कार्यक्रम को कार्यान्वित करो अन्यथा इस्तीफा देकर उसे अपना सभापति चुनने दो। ईमानदारी और सदिच्छा रहते हुए आपसी युद्ध का भय नहीं है।

तुम्हारा
बापू

⊙

तार का जवाब

जीलगोरा,
३-४-३९

मेरे पत्र के जवाब में आपका तार और पत्र मिला—विचार कर रहा हूं। पन्त-प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने और कुछ लोगों ने मेरी स्थिति गलत समझी, गोकि प्रस्ताव की धारा बिल्कुल अवैधानिक है, मगर मैंने उसे पेश होने दिया और अब मैं कांग्रेस के निर्णय से बाध्य हूं। मैं समझता हूं, स्थिति साफ करने के लिए छोटा-सा

वक्तव्य आवश्यक है। लिखिये कि आपको कोई आपत्ति तो नहीं ?
प्रणाम।

आपका
सुभाष

राष्ट्रपति सुभाष बोस का पत्र

जीलगोरा,
६ अप्रैल, १९३९

आदरणीय महात्माजी !

मेज दा (शरत्) की चिट्ठियों में से एक में आपने दोनों दलों के नेताओं की खुले दिलों से बातचीत होने का सुझाव रखा है, ताकि संयुक्त कार्य के लिए भूमि तैयार हो सके। मुझे यह विचार बहुत पसन्द है। कृपया लिखिए कि इस सम्बन्ध में मुझे क्या करना चाहिए। व्यक्तिगत तौर से मैं सोचता हूं आपकी चेष्टा और प्रभाव से एकता के काम में बहुत कुछ हो सकता है। क्या आप सबको एक-साथ करने की अन्तिम चेष्टा न करेंगे? पेश्तर इसके कि हम एकता की सब आशा छोड़ दें मैं प्रार्थना करता हूं कि आप जरा सोचिए, देश आपको क्या मानता है। आप पक्षपाती नहीं हैं इसलिए लोग आपकी ओर ही देखते हैं, आप ही दोनों जुझाऊ दलों को एक कर सकते हैं।

कार्यकारिणी गठन के सम्बन्ध में आपने जो सलाह दी मैं उस-पर गम्भीर विचार कर रहा हूं। मैं अनुभव करता हू, आपकी सलाह निराश की युक्ति है। यह एकता की सब आशा नष्ट करती है। यह कांग्रेस को फूट से नहीं बचाती मगर फूट का रास्ता साफ करती है। इस समय एकमत के केबिनेट के निर्माण का अर्थ दलों को अपने-अपने रास्तों पर अलग-अलग जाने देना है। क्या यह

भीषण जिम्मेदारी नहीं है? क्या आपका विश्वास है कि सयुक्त कार्य बिलकुल असम्भव है? हम ऐसा नहीं समझते। मैंने सुझाया है कि कांग्रेस जैसी है, उस हालत मे संयुक्त कार्यकारिणी ही सर्वोत्तम है, जिसमे यथासम्भव सब दलों का प्रतिनिधित्व हो। आपका विचार सयुक्त केबिनेट के प्रतिकूल है। आपका विरोध सिद्धान्तो के कारण है या आप समझते हैं केबिनेट मे गांधीवादियों को अधिक स्थान मिलने चाहिएं? पिछली बात हो तो लिखिए ताकि मैं इस स्थान पर विचार कर सकू, पहली बात हो तो कृपया अपनी सलाह पर विचार कीजिए। हरिपुरा मे जब मैंने केबिनेट में सोशलिस्टो को रखने की बात कही तब आपने साफ कहा था कि आप ऐसा करने के पक्ष मे हैं। क्या तब से परिस्थिति इतनी बदल गई कि आप एक-दलीय केबिनेट पर जोर दे रहे हैं?

आपने अपने पत्र में लिखा है, दोनों दल आपस मे विरोधी हैं। आपने यह स्पष्ट नहीं किया कि यह विरोधी कार्यक्रम का है या व्यक्तिगत। व्यक्तिगत सम्बन्ध मेरे राय मे कोई बात नही, हम झगड़ सकते हैं और फिर मिल सकते हैं। स्वराज्य पार्टी की मिसाल ही लीजिए, स्वर्गीय देशबन्धु और पंडित मोतीलाल जी के साथ आपके सम्बन्ध काफी मधुर थे। जरूरत पड़ने पर ग्रेट ब्रिटेन की तीन पार्टियां एक साथ मिलकर काम कर सकती हैं। फ्रांस-जैसे देश मे तो हर केबिनेट सयुक्त होता है। क्या हम अंग्रेजों-फ्रेंचों से कम देशभक्त हैं?

अगर आपका विरोध कार्यक्रम आदि पर है तो मैं इस मामले में आपका दृष्टिकोण जानना बहुत पसन्द करूंगा कि कहां हमारे प्रोग्राम में फर्क है और वह भी इतना कि संयुक्त-कार्य असम्भव है। हममें मतभेद है किन्तु जैसाकि मैंने कार्यकारिणी के भूतपूर्व साथियों के इस्तीफे के उत्तर में लिखा है, मतभेद से मतैक्य अधिक हैं।

मेरे अल्टीमेटम के विचार के सम्बन्ध में आपने लिखा है कि देश

पन्त-प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने कुछ नहीं कहा। क्या आप उसे 'एप्रूव' (स्वीकार) करते हैं ? इस प्रस्ताव के पास होने के बाद कार्यकारिणी की नियुक्ति के सम्बन्ध में कांग्रेस सभापति की क्या स्थिति रहती है ? मैं इसलिए यह सवाल फिर कर रहा हूं कि वर्तमान विधान आपका ही है, आपकी राय का मेरी दृष्टि में बहुत महत्त्व है। क्या यह मेरे अन्दर का अविश्वास प्रस्ताव है ? क्या मुझे इस्तीफा देना चाहिए ? बिना शर्त ? मेरे पक्ष के लोगों में दो तरह के मत हैं, एक तो यह है कि मैं बातचीत बन्द कर इस्तीफा दे दूं। मगर मैं चाहता हूं कि मैं अन्त तक एकता कायम करने की चेष्टा करूं ? मैं जानता हूं कि मेरे इस्तीफे का परिणाम क्या होगा ? आप जानते हैं कि मैं आपका अन्धानुकरण नहीं करता किन्तु फिर भी मैं कहता हूं अगर आपकी दृष्टि में उक्त प्रस्ताव अविश्वास का अर्थ रखता है तो मैं इस्तीफा दे दूंगा। इसका साफ कारण यह है कि मैं नहीं चाहता कि भारत का सर्वश्रेष्ठ पुरुष चाहे साफ कहे नहीं मगर यह अनुभव करता हो कि उक्त प्रस्ताव का अर्थ अविश्वास है तो मैं सभापति बना रहूं। इस रुख का कारण आपके प्रति अपार श्रद्धा है।

शायद जैसाकि कुछ पत्र कहते हैं, आपका विचार है, पुरानों को फिर पदों पर बैठाना चाहिए। ऐसा है तो कृपया कांग्रेस के सदस्य बनकर कार्यकारिणी की बागडोर अपने हाथ में ले लीजिए। आपमें और आपके लेफ्टीनेण्टों में बहुत फर्क है। पुरानों की सलाह के खिलाफ पिछले चुनाव में कुछ प्रान्तों में गांधीवादियों ने मुझे मत दिया। त्रिपुरी में वे कहते हैं, उनकी विजय हुई किन्तु दरअसल न उनकी विजय हुई न मेरी हार। वहां आपकी विजय हुई।

मैं आपसे अपील कर रहा था कि कृपया आगे आकर कांग्रेस की बागडोर संभालिए। इससे मामला सुलझ जाएगा, पुरानों के प्रति जो विरोध है, वह अपने-आप मिट जाएगा।

अगर आप ऐसा नहीं कर सकते तो एक दूसरा सुझाव है। स्वाधीनता का संग्राम छेड़ दीजिए और जैसा हम चाहते हैं ब्रिटिश सरकार को अल्टीमेटम दीजिए, ऐसी हालत में हम खुशी से अपने आपसी दल पदों से हट जायेंगे, मगर आप चाहेंगे तो जिसे आप कहेंगे उसे अपने पद और स्थान सौंप देंगे। सिर्फ एक शर्त पर कि आजादी की लड़ाई अवश्य आरम्भ होनी चाहिए। मेरे-जैसे आदमी अनुभव करते हैं कि जो सुयोग हमें आज मिला है, वह राष्ट्र के जीवन में दुर्लभ है। इस कारण से युद्ध आरम्भ करने में कोई भी बलिदान करने के लिए हम तैयार हैं।

अगर आखिर तक आप इसी पर जोर दें कि संयुक्त कार्य-कारिणी ही गठित होना चाहिए और अगर आप चाहते हैं कि मैं अपनी पसन्द की कार्यकारिणी चूनूं तो मैं प्रार्थना करूंगा कि आप अगली कांग्रेस तक अपना विश्वास मुझे दे दीजिए। इस बीच अगर अपनी सेवा और बलिदान से हम अपनी योग्यता न स्थापित कर सके तो कांग्रेस के सामने दोषी होंगे, स्वभावतः पदों से ढकेल दिए जायेंगे। अगर आप अपना विश्वास नहीं दे सकते और एकदलीय कार्यकारिणी के लिए जोर देते हैं तो आप पन्त-प्रस्ताव को कार्यान्वित नहीं करते।

अपने पत्र में आपने लिखा है, भगवान मुझे पथ दिखलाए। महात्माजी ! मैं इन दिनों हर वक्त भगवान से यही प्रार्थना करता रहा हूं कि भगवान मुझे वही रास्ता दिखलावें जो मेरे देश और मेरे देश की स्वाधीनता के लिए सर्वोत्तम हो। मेरा विश्वास है कि वह राष्ट्र हमेशा जीवित रहता है, जिसके नागरिक जरूरत पड़ने पर अपने देश के लिए मरने को तैयार रहते हैं। यह नैतिक या आध्यात्मिक आत्महत्या आसान चीज नहीं है। लेकिन भगवान मुझे वह शक्ति देगा कि जब देश के लिए आवश्यक हो यह बलिदान मैं कर सकूं।

आशा है, आपका स्वास्थ्य ठीक होगा। मैं अच्छा हो रहा हूं। प्रणाम।

आपका
सुभाष

सुभाष बाबू का तार महात्मा गांधी को

दिल्ली से राजकोट रवाना होने के पहले मिलना बहुत आवश्यक है। अगर आप न आ सके तो मैं डॉक्टरों की राय की परवाह किए बिना दिल्ली आ सकता हूं। मैं चाहता हूं कार्यकारिणी और दोनों दलों में एकता के लिए मैं भरसक प्रयत्न करूं चाहे उसका असर स्वास्थ्य पर जो भी पड़े। अगर A.I.C. C. तक मामला अनिश्चित रहा तो मामला बिगड़ता जाएगा और जनता के मन में अशान्ति बढ़ेगी।

सुभाष

महात्माजी का तार सुभाष को

मैं राजकोट जा रहा हूं, वहां से खाली होते ही तुम्हारे हाथ में हूं। मेरी सलाह मानो, केबिनेट बनाओ, कार्यक्रम प्रकाशित करो। राजकोट रविवार को सवेरे पहुंच रहा हूं। शरत् आदि किसी को राजकोट भेज दो, वहां दस दिन लगेंगे।

तुम्हारा
बापू

सुभाष का गांधी के नाम दूसरा पत्र

जीलगोरा,
१० अप्रैल, १९३९

आदरणीय महात्माजी !

कार्यकारिणी पिछले महीनों से इस समस्या पर विचार कर रही है, लेकिन मैं यह नहीं मानता कि यह अनाचार इतना ज्यादा है कि हम राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं चला सकते। मैं यूरोप की राजनैतिक पार्टियों से भिड़ा हूं और दावे के साथ कह सकता हूं कि हमारा संगठन कुछ मामलों मे उनसे बेहतर है। हिंसा के सम्बन्ध में भी मेरा कथन है कि कांग्रेस और कांग्रेस के समर्थकों में जितनी अहिंसात्मक भावना इस समय है उतनी कभी नहीं थी, यह मुमकिन है कि जो कांग्रेस के विरोधी हैं उनमे हिंसा-वृत्ति वर्तमान है और जिसके परिणामस्वरूप दगे होते हैं जिन्हे कांग्रेसी सरकारों को दबाना पड़ता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि कांग्रेस या उसके समर्थकों मे हिंसा-वृत्ति बढ़ी है। यह आशा करना बहुत अधिक है कि जब तक हमारे विरोधी संगठन-जैसे मुस्लिमलीग भाव और कार्य में अहिंसक न हो जाएँ, लड़ाई न छेड़ी जाय।

पंडित पंत के प्रस्ताव के बारे में जानना चाहता हूं कि आप उसे मौलिक रूप मे या परिवर्तित रूप मे पास किया जाना पसन्द करते हैं? क्या आप इस प्रस्ताव को मेरे अन्दर अविश्वास का प्रस्ताव समझते हैं? मैं सुविधा हेतु पंतजी के मौलिक प्रस्ताव और परिवर्तित रूप दोनों का उल्लेख कर रहा हूं।

कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सम्बन्ध में मैंने अपनी राय जाहिर करने के बाद संयुक्त कार्यकारिणी के सम्बन्ध मे आपके तर्कों पर विचार किया किन्तु सन्तुष्ट न हो सका। शरत् बाबू को लिखे गए पत्र में दोनो दलों के नेताओं का आपस मे मिलकर भय-भाव मिटाने के सम्बन्ध में जो सुझाव था, उसमें हम तैयार हैं। पुराने नेताओ और उनके अनुयायियों को ही नहीं, अगर आप हमारे कुछ विचारों और योजनाओं को अपना सकें तो आप सब कांग्रेसियो को गांधी-वादी गिन सकते हैं। मैंने पहले आपको चुप रहने के लिए लिखा था, *उसका मतलब था कि जबतक दोनों पक्ष की बातें न सुन लें* आप सार्वजनिक तौर से कोई वक्तव्य न दें, न कुछ कहें। आपने मेरी बात मान ली इसके लिए मैं बहुत कृतज्ञ हू। लेकिन अब अगर आप चाहें तो आप सार्वजनिक वक्तव्य दे सकते हैं या आप जो उचित समझें कह सकते हैं। मैं सिर्फ यह प्रार्थना करूंगा कि कृपया यह खयाल रखें कि सब कांग्रेसी आपके बारे में क्या सोचते हैं और आपसे क्या आशा रखते हैं।

आपके दिल्ली से राजकोट जाने के समाचार से मैं बहुत निराश हुआ। श्री राजेन्द्र बाबू ने आपसे टेलीफोन द्वारा कहा था कि मैं आपसे मिलने के लिए कितना उत्सुक हू, फिर मेरे डाक्टर ने भी बिड़ला हाउस और श्री महादेव देसाई को फोन किया था। अगर राजकोट के मामले मे आप न लग जाते तो त्रिपुरी का इतिहास कुछ और ही होता। लोग समझते हैं कि आप बिना रियासती प्रजा का नुकसान पहुंचाए राजकोट-संग्राम कुछ सप्ताह के लिए मुलतवी कर सकते थे।

राजकोट के फैसले के सम्बन्ध मे मैं आपका ध्यान खींचना चाहता हूं। *सर मोरिस ग्वियर ने, उसपर व्यक्तिगत हैसियत से* नहीं, भारत के चीफ जस्टिस की हैसियत से दस्तखत किए हैं।

आपका
सुभाष

सुभाष का गांधी के नाम दूसरा पत्र

जीलगोरा,

१० मार्च, १९३९

आदरणीय महात्माजी !

कार्यकारिणी पिछले महीनों से इस समस्या पर विचार कर रही है, लेकिन मैं यह नहीं मानता कि यह भ्रष्टाचार इतना ज्यादा है कि हम राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं चला सकते। मैं यूरोप की राजनैतिक पार्टियों से मिला हूं और दावे के साथ कह सकता हूं कि हमारा संगठन कुछ मामलों में उनसे बेहतर है। हिंसा के सम्बन्ध में भी मेरा कथन है कि कांग्रेस और कांग्रेस के समर्थकों में जितनी अहिंसात्मक भावना इस समय है उतनी कभी नहीं थी, यह मुमकिन है कि जो कांग्रेस के विरोधी हैं उनमें हिंसा-वृत्ति वर्तमान है और जिनके परिणामस्वरूप दंगे होते हैं जिन्हें कांग्रेसी सरकारों को दबाना पड़ता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि कांग्रेस या उसके समर्थकों में हिंसा-वृत्ति बढ़ी है। यह आशा करना बहुत अधिक है कि जब तक हमारे विरोधी संगठन-जैसे मुस्लिमलीग भाव और कार्य में अहिंसक न हो जाएँ, लड़ाई न छेड़ी जाय।

पंडित पंत के प्रस्ताव के बारे में जानना चाहता हूं कि आप उसे मौलिक रूप में या परिवर्तित रूप में पास किया जाना पसन्द करते हैं? क्या आप इस प्रस्ताव को मेरे अन्दर अविश्वास का प्रस्ताव समझते हैं? मैं सुविधा हेतु पंतजी के मौलिक प्रस्ताव और परिवर्तित रूप दोनों का उल्लेख कर रहा हूं।

कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सम्बन्ध मे मैंने अपनी राय जाहिर करने के बाद सयुक्त कार्यकारिणी के सम्बन्ध मे आपके तर्कों पर विचार किया किन्तु सन्तुष्ट न हो सका। शरत् बाबू को लिखे गए पत्र मे दोनों दलों के नेताओ का आपस में मिलकर भय-भाव मिटाने के सम्बन्ध में जो सुझाव था, उसमें हम तैयार हैं। पुराने नेताओं और उनके अनुयायियों को ही नहीं, अगर आप हमारे कुछ विचारों और योजनाओं को अपना सकें तो आप सब कांग्रेसियो को गांधी-वादी गिन सकते हैं। मैंने पहले आपको चुप रहने के लिए लिखा था, उसका मतलब था कि जबतक दोनो पक्ष की बातें न सुन लें आप सार्वजनिक तौर से कोई वक्तव्य न दें, न कुछ कहें। आपने मेरी बात मान ली इसके लिए मैं बहुत कृतज्ञ हू। लेकिन अब अगर आप चाहें तो आप सार्वजनिक वक्तव्य दे सकते हैं या आप जो उचित समझें कह सकते हैं। मैं सिर्फ यह प्रार्थना करूगा कि कृपया यह खयाल रखें कि सब कांग्रेसी आपके बारे मे क्या सोचते हैं और आपसे क्या आशा रखते हैं।

आपके दिल्ली से राजकोट जाने के समाचार से मैं बहुत निराश हुआ। श्री राजेन्द्र बाबू ने आपसे टेलीफोन द्वारा कहा था कि मैं आपसे मिलने के लिए कितना उत्सुक हूं, फिर मेरे डाक्टर ने भी बिड़ला हाउस और श्री महादेव देसाई को फोन किया था। अगर राजकोट के मामले में आप न लग जाते तो त्रिपुरी का इतिहास कुछ और ही होता। लोग समझते हैं कि आप बिना रियासती प्रजा का नुकसान पहुचाए राजकोट-संग्राम कुछ सप्ताह के लिए मुलतवी कर सकते थे।

राजकोट के फैसले के सम्बन्ध मे मैं आपका ध्यान खीचना चाहता हू। सर मोरिस गियर ने, उसपर व्यक्तिगत हैसियत से नहीं, भारत के चीफ जस्टिस की हैसियत से दस्तखत किए हैं।

आपका
सुभाष

महात्मा गांधी द्वारा सुभाष को पत्र

राजकोट,
१० अप्रैल, १६३६

प्रिय सुभाष !

मैंने दोनों दलों के नेताओं के मीटिंग का सुझाव रखा था, किन्तु अब उसकी उपयोगिता नहीं दिखती। भेद और सन्देह बहुत बढ़ गया है। मुझे एक ही रास्ता दिखता है कि भेद को मान लिया जाय और हरएक दल अपना-अपना काम करें। मैं दोनों दलों को एक करने में अपने को असमर्थ पाता हूं। मैं आशा करता हूं ये दोनों बिना कटुता के अपनी नीति के अनुसार कार्य करेंगे। अगर ऐसा हुआ तो देश के लिए अच्छा होगा। पंडित पंत के प्रस्ताव की व्याख्या नहीं कर सकता, मैं जितना ही इसका अध्ययन करता उतना ही उसे नापसन्द करता हूं लेकिन इससे वर्तमान मुश्किल आसान नहीं होती। तुम इसकी अपनी व्याख्या करो और बिना हिचकिचाहट के उसी के अनुसार कार्य करो।

मैं तुम्हारे ऊपर कोई केबिनेट न लाद सकता हूं, न लादूंगा और न तुम्हारे केबिनेट और नीति का (A. I. C. C.) द्वारा मंजूर होने की गारंटी कर सकता हूं। मेम्बरों को अपनी राय देना चाहिए। अगर तुम्हें बहुमत न मिले तो, जब तक बहुमत पक्ष में न कर लो, विरोधी दल का नेतृत्व करो।

क्या तुम्हें मालूम है जहां भी मेरा प्रभाव है, मैंने (C. D.) सत्याग्रह स्थगित कर दी? ट्रावनकोर और जयपुर उज्ज्वल उदा-

हरण हैं। राजकोट में भी मैंने बन्द कर दिया। मैंने बार-बार कहा है, मुझे हिंसा की गंध मिलती है। मैं अहिंसात्मक आन्दोलन के लिए वातावरण नहीं पाता। क्या रामपुर से कुछ सबक नहीं मिलता? हम दोनों एक ही चीज़ को दो तरह से देखते हैं और दो नतीजों पर पहुंचते हैं, तब हम एक प्लेटफार्म पर कैसे आ सकते हैं?

मेरा विश्वास है कि अपने विश्वास के अनुसार काम कर हम देश की अधिक सेवा कर सकते हैं। मैं धन्यवाद नहीं पा सकता था, राजकोट की उपेक्षा नहीं कर सकता था। मैं अच्छा हूं। बा, मलेरिया से पीड़ित हैं।

एक बात भूल गया था, किसी ने तुम्हारे खिलाफ मुझे नहीं रखा। मैंने सेगांव में जो कहा था, वह मेरी धारणा के अनुसार था। यह गलत है कि अगर तुम सोचते हो पुरानों मे एक ही तुम्हारा व्यक्तिगत शत्रु है—प्रेम!

तुम्हारा
बापू

हरण है। राजकोट में भी मैंने बन्द कर दिया। मैंने बार-बार कहा है, मुझे हिंसा की गंध मिलती है। मैं अहिंसात्मक आन्दोलन के लिए वातावरण नहीं पाता। क्या रामपुर से कुछ सबक नहीं मिलता? हम दोनों एक ही चीज को दो तरह से देखते हैं और दो नतीजों पर पहुंचते हैं, तब हम एक प्लेटफार्म पर कैसे आ सकते हैं?

मेरा विश्वास है कि अपने विश्वास के अनुसार काम कर हम देश की अधिक सेवा कर सकते हैं। मैं धन्यवाद नहीं पा सकता था, राजकोट की उपेक्षा नहीं कर सकता था। मैं अच्छा हूं। बा, मलेरिया से पीड़ित हैं।

एक बात भूल गया था, किसी ने तुम्हारे खिलाफ मुझे नहीं रखा। मैंने सेगांव में जो कहा था, वह मेरी धारणा के अनुसार था। यह गलत है कि अगर तुम सोचते हो पुरानों में एक ही तुम्हारा व्यक्तिगत शत्रु है—प्रेम!

तुम्हारा
बापू

महात्मा गांधी द्वारा सुभाष को पत्र

राजकोट,
१० अप्रैल, १६३६

प्रिय सुभाष !

मैंने दोनों दलों के नेताओं के मीटिंग का सुझाव रखा था, किन्तु अब उसकी उपयोगिता नहीं दिखती। भेद और सन्देह बहुत बढ़ गया है। मुझे एक ही रास्ता दिखता है कि भेद को मान लिया जाय और हरएक दल अपना-अपना काम करें। मैं दोनों दलों को एक करने में अपने को असमर्थ पाता हूं। मैं आशा करता हूं ये दोनों बिना कटुता के अपनी नीति के अनुसार कार्य करेंगे। अगर ऐसा हुआ तो देश के लिए अच्छा होगा। पंडित पंत के प्रस्ताव की मैं व्याख्या नहीं कर सकता, मैं जितना ही इसका अध्ययन करता हूं उतना ही उसे नापसन्द करता हूं लेकिन इससे वर्तमान मुश्किल आसान नहीं होती। तुम इसकी अपनी व्याख्या करो और बिना हिचकिचाहट के उसी के अनुसार कार्य करो।

मैं तुम्हारे ऊपर कोई केबिनेट न लाद सकता हूं, न लादूंगा और न तुम्हारे केबिनेट और नीति का (A. I. C. C.) द्वारा मंजूर होने की गारंटी कर सकता हूं। मेम्बरों को अपनी राय देना चाहिए। अगर तुम्हें बहुमत न मिले तो, जब तक बहुमत पक्ष में न कर लो, विरोधी दल का नेतृत्व करो।

क्या तुम्हें मालूम है जहां भी मेरा प्रभाव है, मैंने (C. D.) भद्र अवज्ञा स्थगित कर दी? ट्रावनकोर और जयपुर उज्ज्वल उदा-

हरण हैं। राजकोट में भी मैंने बन्द कर दिया। मैंने बार-बार कहा है, मुझे हिंसा की गंध मिलती है। मैं अहिंसात्मक आन्दोलन के लिए वातावरण नहीं पाता। क्या रामपुर से कुछ सबक नहीं मिलता? हम दोनों एक ही चीज को दो तरह से देखते हैं और दो नतीजों पर पहुंचते हैं, तब हम एक प्लेटफार्म पर कैसे आ सकते हैं?

मेरा विश्वास है कि अपने विश्वास के अनुसार काम कर हम देश की अधिक सेवा कर सकते हैं। मैं धन्यवाद नहीं पा सकता था, राजकोट की उपेक्षा नहीं कर सकता था। मैं अच्छा हूं। बा, मलेरिया से पीड़ित हैं।

एक बात भूल गया था, किसीने तुम्हारे खिलाफ मुझे नहीं रखा। मैंने सेगांव में जो कहा था, वह मेरी धारणा के अनुसार था। यह *गलत है कि अगर तुम सोचते हो पुरानों में एक ही तुम्हारा व्यक्तिगत शत्रु है*—प्रेम!

तुम्हारा
बापू

सुभाष का पत्र गांधी को

१३ अप्रैल १९३९

आदरणीय महात्माजी !

सेगांव में जो बात हुई थी, उससे यह तो लगता था कि हमारे अन्दर मत-वैभिन्न है, पर यह विभिन्नता आधारभूत सिद्धान्तों की नहीं है। उदाहरण के तौर पर आपने अनाचार और हिंसा के सम्बन्ध में अपनी राय जाहिर की, आपने अल्टीमेटम और स्वराज्य संग्राम फिर से चलाने का भी विरोध किया, किन्तु क्या यह मतभेद आधारभूत सिद्धान्तों पर है ? कार्यक्रम का फैसला करना कांग्रेस का काम है।

हम कांग्रेस के सामने अपने विचार और योजना रख सकते हैं, यह कांग्रेस पर निर्भर है कि उसे स्वीकृत करे या अस्वीकृत। त्रिपुरी में मेरे दोनों विचारों को अस्वीकृत कर दिया गया, मगर मैं इसकी शिकायत नहीं करता, डेमोक्रेसी में ऐसा होता ही है। मेरा अभी भी विश्वास है कि मैं ठीक था, कांग्रेस इसे एक दिन अनुभव करेगी। मैं आशा करता हूं, वह दिन बहुत देर बाद नहीं आएगा। मान लीजिए, मतभेद है फिर भी हम एकसाथ कार्य नहीं कर सकते। मतभेद रहे हैं और रहेंगे।

संयुक्त और एकरूपीय कार्यकारिणी के विषय में हमारी बातचीत हुई थी। मैंने कहा था, मैं सरदार पटेल का सहयोग पाने की चेष्टा करूंगा। अगर मैं बीमार नहीं पड़ता या वर्धा में २२ को हम मिल पाते तो शायद संयुक्त कार्य का रास्ता निकल आता। आपने निर्दे... ...) मेरी नीति और योजना मान लें तो मुझे

अपनी नीति वालों की कार्यकारिणी बनानी चाहिए, किन्तु मेरी राय है कि कार्यकारिणी ऐसी होनी चाहिए जो कांग्रेस गठन को पूर्ण रूप से प्रतिबिम्बित करे। समय ऐसा है कि हमें अपना राष्ट्रीय मोर्चा बढ़ाना चाहिए।

अनाचार के सम्बन्ध में हम सहमत हैं, कार्य यह है कि आपके दृष्टिकोण में कुछ अतिरिक्त है। फिर मेरा मत है कि राष्ट्रीय संग्राम होने से यह भी घट जाएगा।

श्री राजेन्द्र बाबू ६ तारीख को पधारे थे। श्रमि विषय पर विचार करने के बाद हमने कांग्रेस के सम्बन्ध में बातचीत की। राजेन्द्र बाबू ने फोन किया, मेरे डाक्टर ने फोन किए, तार दिए गए पर आप राजकोट में लिप्त रहे। मेरी दृष्टि में कांग्रेस का कार्य राजकोट से हजार गुना ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। ७ अप्रैल के तार में आपने शरत् या किसी अन्य व्यक्ति के राजकोट आने की बात लिखी किन्तु जब पत्र-व्यवहार से मामला तय नहीं हुआ तो किसी दूसरे द्वारा ऐसा नाजुक और गम्भीर मामला हल नहीं हो सकता।

आपके १० तारीख के पत्र के सम्बन्ध में मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आपके जवाब ज्यादातर निराशाजनक हैं। पूरे पत्र में निराशा है, जिसमें मैं भाग नहीं ले सकता। आपको हमारी देशभक्ति में विश्वास रखना चाहिए था कि आवश्यक होने पर हम बलिदान कर सकते हैं। पत्र-प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने कोई सलाह नहीं दी।

अगर आप जन-आन्दोलन के सम्बन्ध में इतने निराश हैं तो देशी रियासतों में नागरिक स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासन की स्थापना की आशा कैसे करते हैं? आपने कहा है कहां आपका प्रभाव है आपने आन्दोलन स्थगित कर दिया और सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली, मगर क्या आपकी जिन्दगी, राष्ट्र की नहीं है? क्या देश नहीं आशा करता कि आप उसका उपयोग

सुभाष का पत्र गांधी को

१३ अप्रैल १६३६

आदरणीय महात्माजी !

सेगाव में जो बात हुई थी, उससे यह तो लगता था कि हमारे अन्दर मत-वैभिन्न है, पर यह विभिन्नता आधारभूत सिद्धान्तों की नहीं है। उदाहरण के तौर पर आपने अनाचार और हिंसा केसम्बन्ध में अपनी राय जाहिर की, आपने अल्टीमेटम और स्वराज्य संग्राम फिर से चलाने का भी विरोध किया, किन्तु क्या यह मतभेद आधारभूत सिद्धान्तों पर है ? कार्यक्रम का फैसला करना कांग्रेस का काम है।

हम कांग्रेस के सामने अपने विचार और योजना रख सकते हैं, यह कांग्रेस पर निर्भर है कि उसे स्वीकृत करे या अस्वीकृत। त्रिपुरी में मेरे दोनों विचारों को अस्वीकृत कर दिया गया, मगर मैं इसकी शिकायत नहीं करता, डेमोक्रेसी में ऐसा होता ही है। मेरा अभी भी विश्वास है कि मैं ठीक था, कांग्रेस इसे एक दिन अनुभव करेगी। मैं आशा करता हूं, वह दिन बहुत देर बाद नहीं आएगा। मान लीजए, मतभेद है फिर भी हम एकसाथ कार्य नहीं कर सकते। मतभेद रहे हैं और रहेंगे।

संयुक्त और एकदलीय कार्यकारिणी के विषय में हमारी बातचीत हुई थी। मैंने कहा था, मैं सरदार पटेल का सहयोग पाने की चेष्टा करूंगा। अगर मैं बीमार नहीं पड़ता या वर्धा में २२ को हम मिल पाते तो शायद संयुक्त कार्य का रास्ता निकल आता। आपने लिखा है (A.I.C.C.) मेरी नीति और योजना मान लें तो मुझे

अपनी नीति वालों की कार्यकारिणी बनानी चाहिए, किन्तु मेरी राय है कि कार्यकारिणी ऐसी होनी चाहिए जो कांग्रेस गठन को पूर्ण रूप से प्रतिबिम्बित करे। समय ऐसा है कि हमें अपना राष्ट्रीय मोर्चा बढ़ाना चाहिए।

अनाचार के सम्बन्ध में हम सहमत हैं, कार्य यह है कि आपके दृष्टिकोण में कुछ अतिरिक्त है। फिर मेरा मत है कि राष्ट्रीय संग्राम होने से यह भी घट जाएगा।

श्री राजेन्द्र बाबू ६ तारीख को पधारे थे। श्रमि विषय पर विचार करने के बाद हमने कांग्रेस के सम्बन्ध में बातचीत की। राजेन्द्र बाबू ने फोन किया, मेरे डाक्टर ने फोन किया, तार दिए गए पर आप राजकोट में लिप्त रहे। मेरी दृष्टि में कांग्रेस का कार्य राजकोट से हजार गुना ज्यादा महत्वपूर्ण है। ७ अप्रैल के तार में आपने शरत् या किसी अन्य व्यक्ति के राजकोट आने की बात लिखी किन्तु जब पत्र-व्यवहार से मामला तय नहीं हुआ तो किसी दूसरे द्वारा ऐसा नाजुक और गम्भीर मामला हल नहीं हो सकता।

आपके १० तारीख के पत्र के सम्बन्ध में मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि आपके जवाब ज्यादातर निराशाजनक हैं। पूरे पत्र में निराशा है, जिसमें मैं भाग नहीं ले सकता। आपको हमारी देशभक्ति में विश्वास रखना चाहिए था कि आवश्यक होने पर हम बलिदान कर सकते हैं। पंत-प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने कोई सलाह नहीं दी।

अगर आप जन-आन्दोलन के सम्बन्ध में इतने निराश हैं तो देशी रियासतों में नागरिक स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासन की स्थापना की आशा कैसे करते हैं? आपने कहा है वहां आपका प्रभाव है आपने आन्दोलन स्थगित कर दिया और सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली, मगर क्या आपकी जिन्दगी राष्ट्र की नहीं है? क्या देश नहीं आशा करता कि आप उसका उपयोग

सुभाष का पत्र गांधी को

१३ अप्रैल १९३९

आदरणीय महात्माजी !

सेगांव में जो बात हुई थी, उससे यह तो लगता था कि हमारे अन्दर मत-वैभिन्न है, पर यह विभिन्नता आधारभूत सिद्धान्तों की नहीं है। उदाहरण के तौर पर आपने अनाचार और हिंसा के सम्बन्ध में अपनी राय जाहिर की, आपने अल्टीमेटम और स्वराज्य संग्राम फिर से चलाने का भी विरोध किया, किन्तु क्या यह मतभेद आधारभूत सिद्धान्तों पर है ? कार्यक्रम का फैसला करना कांग्रेस का काम है।

हम कांग्रेस के सामने अपने विचार और योजना रख सकते हैं, यह कांग्रेस पर निर्भर है कि उसे स्वीकृत करे या अस्वीकृत। त्रिपुरी में मेरे दोनों विचारों को अस्वीकृत कर दिया गया, मगर मैं इसकी शिकायत नहीं करता, डेमोक्रेसी में ऐसा होता ही है। मेरा अभी भी विश्वास है कि मैं ठीक था, कांग्रेस इसे एक दिन अनुभव करेगी। मैं आशा करता हूं, वह दिन बहुत देर बाद नहीं आएगा। मान लीजए, मतभेद है फिर भी हम एकसाथ कार्य नहीं कर सकते। मतभेद रहे हैं और रहेंगे।

सयुक्त और एकदलीय कार्यकारिणी के विषय में हमारी बातचीत हुई थी। मैंने कहा था, मैं सरदार पटेल का सहयोग पाने की चेष्टा करूंगा। अगर मैं बीमार नहीं पड़ता या वर्धा में २२ को हम मिल पाते तो शायद सयुक्त कार्य का रास्ता निकल आता। आपने लिखा है (A.I.C.C.) मेरी नीति और योजना मान लें तो मुझे

अपनी नीति वालों की कार्यकारिणी बनानी चाहिए, किन्तु मेरी राय है कि कार्यकारिणी ऐसी होनी चाहिए जो कांग्रेस गठन को पूर्ण रूप से प्रतिबिम्बित करे। समय ऐसा है कि हमें अपना राष्ट्रीय मोर्चा बढ़ाना चाहिए।

अनाचार के सम्बन्ध में हम सहमत हैं, कार्य यह है कि आपके दृष्टिकोण में कुछ अतिरिक्त है। फिर मेरा मत है कि राष्ट्रीय संग्राम होने से यह भी घट जाएगा।

श्री राजेन्द्र बाबू ६ तारीख को पधारे थे। श्रमि विषय पर विचार करने के बाद हमने कांग्रेस के सम्बन्ध में बातचीत की। राजेन्द्र बाबू ने फोन किया, मेरे डाक्टर ने फोन किय, तार दिए गए पर आप राजकोट में लिप्त रहे। मेरी दृष्टि में कांग्रेस का कार्य राजकोट से हज़ार गुना ज्यादा महत्वपूर्ण है। ७ अप्रैल के तार में आपने शरत् या किसी अन्य व्यक्ति के राजकोट आने की बात लिखी किन्तु जब पत्र-व्यवहार से मामला तय नहीं हुआ तो किसी दूसरे द्वारा ऐसा नाजुक और गम्भीर मामला हल नहीं हो सकता।

आपके १० तारीख के पत्र के सम्बन्ध में मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आपके जवाब ज्यादातर निराशाजनक हैं। पूरे पत्र में निराशा है, जिसमें मैं भाग नहीं ले सकता। आपको हमारी देशभक्ति में विश्वास रखना चाहिए था कि आवश्यक होने पर हम बलिदान कर सकते हैं। पत्र-प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने कोई सलाह नहीं दी।

अगर आप जन-आन्दोलन के सम्बन्ध में इतने निराश हैं तो देशी रियासतों में नागरिक स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासन की स्थापना की आशा कैसे करते हैं? आपने कहा है जहां आपका प्रभाव है आपने आन्दोलन स्थगित कर दिया और सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली, मगर क्या आपकी जिन्दगी, राष्ट्र की नहीं है? क्या देश नहीं आशा करता कि आप उसका उपयोग

राजकोट से बड़े मामले में करें ? राजकोट वाले अगर अपने प्रयत्न से नहीं आपके प्रताप से स्वराज्य पायेंगे तो वे राजनैतिक दृष्टि से अविकसित रहेंगे।

राजनीति के साथ आपके हमारे आर्थिक मामलों में भी अलग-अलग रहने का उल्लेख किया है, क्योंकि शायद आप हमारी भारत के औद्योगीकरण की योजना को पसन्द नहीं करते, यद्यपि उसमें गृह-उद्योग को प्रथम दिए जाने की योजना भी सम्मिलित है। राजनीति में हमारा आधारभूत सिद्धान्तों का भेद मुझे नहीं दिखता। मैं आशा करता था, आपके द्वारा खाई पाट दी जाएगी।

आज अगर संयुक्त कार्य असंभव है तो हमेशा ही असंभव है, क्योंकि देश में जो वृत्ति आ गई है, वह रहेगी ही। आपने पत्रों में लिखा है कि मैं अपना कार्यक्रम (A.I.C.C.) के सामने रखूं, लेकिन कांग्रेस ने मुझे एक खास तरह से कार्यकारिणी बनाने का हुक्म दिया है, मेरे भाषण में मेरा प्रोग्राम पेश किया गया था, जिसे कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया। जबतक कार्यकारिणी का मामला तय नहीं हो जाता, तबतक मैं (A.I.C.C.) के सामने कार्यक्रम नहीं रखना चाहता।

आपने लिखा था, समस्या का हल मेरे पास है, उसी के अनुसार मैं अपने विचार और समस्याओं का हल आपके सामने पेश कर रहा हूं। लेकिन अधिकांश सुझाव आपको पसन्द नहीं। अब आप ही कार्यकारिणी के सदस्यों के सम्बन्ध में अपनी इच्छा से अवगत कराइए। पंत-प्रस्ताव कहता है, कार्यकारिणी का निर्माण न सिर्फ आपकी इच्छा से हो बल्कि वह आपकी पूर्ण विश्वास-भाजन भी हो। मैं एकदलीय कार्यकारिणी की नियुक्ति के सम्बन्ध में आपकी सलाह को कार्य-रूप नहीं दे सकता, क्योंकि वह आपकी विश्वास-भाजन नहीं होगी। फिर मेरी राय में एकदलीय कार्यकारिणी देश के स्वार्थों के विपरीत होगी।

आशा है, त्रिपुरी-कांग्रेस ने जो कार्य-भार आपपर दिया है, उसे पूर्ण करेंगे। अगर आप यह करने से भी इनकार करें तो मैं क्या करूं? क्या मैं (A. I. C. C.) को कार्यकारिणी चुनने को कहूं? या आप और कोई सलाह देंगे? आशा है, बा (कस्तूरबा गांधी) अच्छी होंगी और शीघ्र ही आरोग्य हो जाएंगी। आपका स्वास्थ्य खासकर ब्लड प्रेशर कैसा है? मैं अच्छा हो रहा हूं। प्रणाम।

आपका

—राघ

सुभाष द्वारा महात्मा जी को तार

१४ अप्रैल, १९३९

आपकी उपस्थिति आवश्यक है। क्या मई का पहला सप्ताह ठीक होगा?

[सुभाष]

⊙

गांधी द्वारा सुभाष को तार

मेरा विश्वास है कि अपने पसन्द की कार्यकारिणी चुनना चाहिए।

[बापू]

⊙

सुभाष द्वारा गांधी को तार

मैं आपकी सलाह को कार्यरूप नहीं दे सकता। अब यही उपाय है कि आप कार्यकारिणी चुन दें। अगर किसी कारण से आप कार्यकारिणी नामजद नहीं करते तो, विषय (A. I. C. C.) के सामने जाएगा, फिर भी आखिरी चेष्टा करनी चाहिए। कृपया जवाब दीजिए।

[सुभाष]

⊙

उपरोक्त तार के बाद सुभाष का गांधी को तार

आदरणीय महात्माजी!

बहुतों की राय है (A. I. C. C.) से पहले कार्यकारिणी बन [illegible]। (A. I. C. C.) में आपकी उपस्थिति आवश्यक

है। आप पसन्द करें तो (A. I. C. C.) स्थगित कर दी जाय। मैं चाहता हूं पत्र-व्यवहार से समझौता न हो तो (A. I. C. C.) के पहले हमें मिलना चाहिए। मैं एकदलीय कार्यकारिणी की विषय में आपकी सलाह को कार्यरूप नहीं दे सकता, आप कार्यकारिणी नामजद कर दें कार्यकारिणी की बैठक होगी और उसके बाद (A. I. C. C.) की अन्यथा मामला (A I. C. C.)के सामने जाएगा।

आपका

सुभाष

⊙

गांधी का तार सुभाष को

२८ तारीख ही रहने दो, मीटिंग में आऊंगा, कार्यकारिणी लाद नहीं सकता। कार्यकारिणी बनाओ या (A. I. C C.) को फैसला करने दो। संयुक्त केबिनेट अव्यावहारिक। समय हुआ तो वक्तव्य दूंगा।

[बापू]

⊙

सुभाष का तार गांधी जी को

अगर आप वक्तव्य दें तो पत्र-व्यवहार प्रकाशित करने की अनुमति दें।

[सुभाष]

⊙

गांधीजी का उत्तर

२४ को रवाना होकर २७ को पहुंच रहा हूं।

[बापू]

⊙

बोस का उत्तर गांधी के नाम

जवाहरलाल जी कल यहां थे, यह बेहतर है कि आप कलकत्ते

के पास यात्रा भंग करें ताकि हम मिल सकें। यह विचार पसन्द हो, तो तार दें।

[सुभाष]

⊙

सुभाष का पुनः गांधी जी के नाम पत्र

जवाहरलाल जी और मैं आशा करता हूं कि हमारी मुलाकात का परिणाम उत्तम निकले। हम दोनों मिलने के पहले पत्र-व्यवहार प्रकाशित करना अवांछनीय और अनावश्यक समझते हैं।

[सुभाष]

⊙

सुभाष ने गांधी जी को तार दिया

२० अप्रैल, १९३९

मैं आपसे हर क्षेत्र में सहयोग की अपील करता हूं। जवाहर से मैंने साथ रहने और बातचीत में भाग लेने के लिए कहा और उन्होंने स्वीकार कर लिया।

[सुभाष]

⊙

सुभाष द्वारा गांधी जी को पुनः तार

५ मई, १९३९

मैं पत्र-व्यवहार प्रकाशित करने की आपकी अनुमति चाहता हूं।

[सुभाष]

⊙

गांधी द्वारा सुभाष को तार

प्रिय सुभाष ! पत्र व्यवहार प्रकाशित कर दो—प्रेम।

[बापू]

● 'सुभाष-गांधी पत्राचार' "The Important Speeches and writings of Subhash Chandra Bose" के आधार संक्षिप्त रूप में भाषान्तरित।

श्री एम० ए० जिन्ना के नाम

१६३८ की ग्रीष्म में सुभाष और मिस्टर मुहम्मद अली जिन्ना के बीच हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रश्न को लेकर पत्राचार हुआ था।

पत्राचार का मुख्य विषय था—क्या मुस्लिम लीग, संपूर्ण मुस्लिम जाति का प्रतिनिधित्व करती है?

सुभाष के शब्दों में "कांग्रेस के लिए साम्प्रदायिक संस्था का कोई औचित्य नहीं है। इसने साम्प्रदायिकता के विरुद्ध सदैव संघर्ष किया है और विशुद्ध भारतीयता की भावना को दृढ़ बनाने के लिए, दृढ़ प्रतिज्ञ रही है।"

[सुभाष-जिन्ना पत्राचार]

सुभाष जिन्ना-पत्राचार

सन् १९३८ में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस और मिस्टर एम० ए० जिन्ना (मोहम्मद अली जिन्ना) के बीच 'हिन्दू-मुस्लिम' प्रश्न पर तर्क हुआ। इस वार्ता का मुख्य विषय मुस्लिम लीग की मान्यता और प्रतिनिधित्व का दावा था।

यह वार्ता बीच में ही स्थगित हो गई क्योंकि कांग्रेस ने लीग की स्थिति को स्वीकार नहीं किया।

स्पष्टीकरण के लिए यह पत्राचार जिन्ना के पत्र से आरम्भ करना ही ठीक होगा।

"यह कहना कि कांग्रेस हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर मुस्लिम लीग से समझौता-वार्ता करने को तैयार है दूसरी ओर यह कहना कि *मुस्लिम लीग मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था नहीं है, दोनों बातें* एक-दूसरे के बिल्कुल विरुद्ध हैं। कांग्रेस अध्यक्ष मिस्टर सुभाषचन्द्र बोस ने कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में अपनी दलील पेश की है...

मिस्टर बोस एक ओर तो अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व की बात कहते हैं, दूसरी ओर मुस्लिम लीग को मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था के रूप में नहीं स्वीकारते।

मिस्टर बोस ने स्पष्ट रूप से अथवा न जानकारी में अपने

बहुमत प्रतिनिधित्व का दावा किया है। मैं मिस्टर बोस को उनके इस न्यायपूर्ण कथन के लिए बधाई देता हूं।

जहां तक मुस्लिम लीग का प्रश्न था, इसकी योजना और रूपरेखा कार्य-कारिणी द्वारा करांची में बनाई गई थी।"

सुभाष और जिन्ना के पत्राचार का मुख्य विषय, लीग के अस्तित्व, प्रतिनिधित्व और हिन्दू-मुस्लिम का प्रश्न था।

यह संक्षिप्त पत्राचार स्पष्ट करता है कि सुभाष का जिन्ना से किन बातों पर मतभेद था?

१५ मई, १९३८
मेरीन ड्राइव, बम्बई

प्रिय श्री जिन्ना !

गत रात्रि मैंने अपनी स्थिति के सम्बन्ध में आपको एक टिप्पणी प्रेषित की थी। आपने हमारे निर्माणक प्रस्ताव के सम्बन्ध में पूछा था। मेरे विचार से स्पष्टीकरण के लिए मेरी टिप्पणी पर्याप्त है।

आपके सुझाव के विषय में कांग्रेस की प्रतिक्रिया दूसरे चरण में होगी। कमेटी की आगामी बैठकों में परस्पर विचार-विनिमय द्वारा कोई परिणाम निकलेगा।

आपका
सुभाष

कलकत्ता
२७ जून १९३८

प्रिय श्री जिन्ना !

आपका ६ जून का पत्र मुस्लिम लीग की कार्यकारिणी द्वारा पारित प्रस्ताव के समर्थनसहित यथा समय कलकत्ता पहुंच गया

था, किन्तु मैं यात्रा पर था।

कांग्रेस की कार्यकारिणी की बैठक २६ जुलाई को वर्धा में होगी। उस समय आपका पत्र और मुस्लिम लीग का प्रस्ताव कमेटी के निर्णय से शीघ्रातिशीघ्र अवगत कराने का प्रयत्न करूंगा।...

सादर

सुभाष चन्द्र बोस

वर्धा

....

प्रिय श्री जिन्ना !

अपने ६ जून १६३८ के पत्र के साथ आपने मुस्लिम लीग की कार्यकारिणी द्वारा प्रस्तावित जो प्रस्ताव भेजे थे, कांग्रेस कार्यकारिणी ने पूर्ण गंभीरता के साथ उसपर विचार किया।

प्रथम प्रस्ताव में लीग-कौंसिल ने अपनी स्थिति और स्तर का स्पष्टीकरण किया है।

इसका अर्थ यह हुआ कि जब साम्प्रदायिकता के प्रश्न पर समझौता करने बैठे तो कांग्रेस लीग के स्पष्टीकरण के अनुसार उसके प्रस्ताव को मान ले—परन्तु स्पष्ट रूप से इसमें एक कठिनाई है। यद्यपि प्रस्ताव में 'केवल मात्र' विशेषण का प्रयोग नहीं किया गया है किन्तु प्रस्ताव की भाषा संकेत करती है कि विशेषण 'आवरण युक्त' रखा गया है।

कार्यकारिणी को लीग के निषेधक स्तर को मान्यता देने के विरुद्ध चेतावनी भी दी जा चुकी है।

मुस्लिम लीग एक मुस्लिम संस्था है जो स्वतन्त्र रूप से लीग का कार्य करती है। उनमें से कुछ कांग्रेस के विश्वासपात्र समर्थक हैं। उनमें से कुछ ही मुस्लिम कांग्रेस के कार्यकर्ता हैं। उनमें से कुछ ऐसे हैं जो देश में उल्लेखनीय प्रभाव नहीं रखते। सीमा प्रांत

के मुस्लिम भी पूर्ण रूप से कांग्रेस के साथ हैं।

आप देखेंगे कि इन सच्चाइयों के बावजूद कांग्रेस के लिए लीग के प्रथम प्रस्ताव को स्वीकार करना, असंभव ही नहीं, उचित भी नहीं है।

अतः कांग्रेस कमेटी आशा करती है कि लीग कांग्रेस से कोई असंभव कार्य करने के लिए नहीं कहेगी। क्या यह पर्याप्त नहीं है कि कांग्रेस लीग के साथ अत्यधिक मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है और हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर सम्मानपूर्ण समझौता करने को उत्सुक है ?

यद्यपि यह स्वीकार किया जा चुका है कि कांग्रेस-रजिस्टरों में अधिकांशतः हिन्दू लोग हैं। कांग्रेस के पास स्पष्टतः मुस्लिम तथा अन्य धर्म जाति के लोगों की भारी संख्या है।

यह कांग्रेस की परम्परा रही है कि उसने सभी भारतवासियों को (चाहे वे जिस धर्म और जाति के रहे हों) निःपक्ष रूप से प्रतिनिधित्व प्रदान किया है।

यह उल्लेखनीय है कि कांग्रेस के सभापति और महामंत्री के रूप में मुस्लिम ने कांग्रेस और देश का विश्वास प्राप्त किया है।

कांग्रेस कार्यकर्ता की यह परम्परा है कि वह अपने विश्वास को मिटाता नहीं। कोई अपने भाग्य के सहारे कांग्रेस में नहीं आया वरन् किसी का कांग्रेस में आना अथवा उससे निकलकर जाना, उसकी राजनीतिक सिद्धान्तवादिता और कांग्रेस की नीतियों के समर्थन-असमर्थन पर निर्भर है। अत. कांग्रेस के लिए साम्प्रदायिक संस्था का कोई औचित्य नहीं है। इसने साम्प्रदायिकता के विरुद्ध सदैव संघर्ष किया है और विशुद्ध भारतीयता की भावना को दृढ़ बनाने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ रही है।...

कांग्रेस को प्रसन्नता होगी यदि आपकी लीग कौंसिल उसके

कंधे से कंधा मिलाकर राष्ट्रीय एकता को बनाए रखे और अपने सामूहिक उद्देश्य में सफलता प्राप्त करे। दूसरे प्रस्ताव के सम्बन्ध में मैं चिन्तित हूं।

जहां तक तीसरे प्रस्ताव का सम्बन्ध है, कांग्रेस कमेटी उसे समझ पाने में असमर्थ है।

कांग्रेस कमेटी के अनुसार—मुस्लिम लीग विशुद्ध साम्प्रदायिकतावादी संस्था है, क्योंकि वह केवल मुस्लिम-हित की बात सोचती है और इसकी सदस्यता केवल मुसलमानों को ही प्राप्त हो सकती है। लीग हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर कांग्रेस से वार्ता करना चाहती है किन्तु इससे प्रभावित होने वाले अल्पसंख्यकों के प्रश्न पर नहीं। यदि अल्पसंख्यक कांग्रेस के प्रति दुख और अनीति का अनुभव करते हैं तो कांग्रेस को उनके साथ उदारता और न्याय का व्यवहार करना पड़ेगा क्योंकि जाति-पांति को दूर रखकर समस्त भारतीयों का प्रतिनिधित्व करने वाली कांग्रेस, सिद्धान्तः ऐसा करने के लिए बाध्य है।

आशा है कि आगामी बैठक में हम परस्पर सहयोग की समझौता और वार्ता मे सफल होंगे।

आपका

एस० सी० बोस

कलकत्ता,

१६ अगस्त, १६७३

प्रिय श्री जिन्ना !

आपके २ अगस्त १६३८ के पत्र के लिए बारम्बार धन्यवाद। खेद है कि विलम्ब से उत्तर दे रहा हूं, यद्यपि यह एक महत्वपूर्ण मसला था।

मैं आपका पत्र कांग्रेस कार्यकारिणी की सितम्बर में आहूत

होने वाली बैठक में प्रस्तुत करूंगा, अतः उसके बाद आपको पत्र लिखूंगा।

आपका

सुभाष

कांग्रेस कमेटी का प्रस्ताव

प्रिय श्री जिन्ना !

कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने आपके १० अक्टूबर, १९३८ के पत्र पर विधिवत् विचार किया। जब तक मुस्लिम लीग कांग्रेस के साथ सहयोग-समर्थन का समझौता नहीं करती तबतक कांग्रेस के लिए हिन्दू-मुस्लिम-प्रश्न पर वार्ता संभव नहीं।

मुझे पत्र का उत्तर देर से देने के लिए खेद है किन्तु कांग्रेस कमेटी के निर्णय के पूर्व मैं कुछ नहीं कहना चाहता था।

आपका

सुभाष

---

१. 'सुभाष जिन्ना पत्राचार' Important speeches and writings of Subhash Chandra Bose' के आधार रूपान्तरित।

कांग्रेसी नेताओं के नाम

साथियो !

आज मैं तुमसे उसी हैसियत से बोल रहा हूं जिस हैसियत से एक क्रान्तिकारी दूसरे क्रान्तिकारी को क्रान्ति का आमंत्रण देता है। भारत आज भयानक राजनीतिक संकट में पड़ा है और अगर आपने कोई भी गलत कदम उठाया तो आपकी आजादी की मंजिल महज एक सपना बनकर रह जाएगी। आप नहीं समझ सकते कि आज मेरे दिल की धड़कनों में कितनी चिन्ताएं आ समाई हैं, जबकि एक तरफ तो आजादी को इतना निकट देख रहा हूं और दूसरी तरफ आपकी मनोवृत्ति से आजादी को कोसों दूर हटते हुए भी पा रहा हूं।

मुझे यह देखकर आश्चर्य हो रहा है कि अंग्रेज सरकार अपने धोखेबाज प्रचार में इतनी सफल हो गई है कि तीन साल पहले जिस देश ने करवट बदलकर आजादी की लड़ाई का ऐलान किया था और 'करो या मरो' का नारा बुलन्द किया था—आज उसी देश के रहनुमा (नेता) चन्द सीटों और पदों से सन्तुष्ट होने के लिए तैयार हैं। हम, जो इस समय विदेश में हैं, भारत की स्थिति को निरपेक्ष रूप से देख सकते हैं और इसीलिए मेरा कर्तव्य है कि मैं आपको वास्तविकता से परिचित कराऊं।

राज्य के राजनीतिक संकट का मुख्य कारण यह है कि हमारे

देश के वे प्रभावशाली व्यक्ति जिनके दिल में ३ साल पहले आजादी के घाव कसक उठे थे, वे आज समझौते के लिए अपना स्वाभिमान बेचने को तैयार हैं। यह कदम बहुत गलत है। आजादी के मसले पर समझौते नहीं, युद्ध हुआ करते हैं—सन्धियां नहीं, बलिदान हुआ करते हैं। फिर आपकी निराशा का क्या कारण है, यह मेरी समझ में नहीं आता। मुझे विश्वास है कि शीघ्र और बहुत शीघ्र हम अपनी आजादी जीतेंगे।

प्रश्न किया जा सकता है कि मेरे इस असाधारण आशावाद का कारण क्या है ?

कारण यह है कि मुझे विश्वास है कि बर्मा में हार हो जाने के बाद भी पूर्वी एशिया में शान्ति नहीं होगी। एक और रक्तिम युद्ध का सूत्रपात होगा, जिसके दौरान भारत को भी कन्धे से कन्धा लगाकर अपनी लड़ाई जीतनी होगी।

फिर, भारत आज एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन चुका है। वह महज पार्लियामेंट की नहीं वरन् विश्वशान्ति की शर्त बन गया है। अतः अपने मसले को दुनिया के सामने ठीक तौर से रखने और दूसरों की सहानुभूति जीतने के लिए हमें दो कार्य करने होंगे।

पहले तो हमें हर तरह के समझौतों को ठोकरें मारकर चूर कर देना होगा। दूसरी बात यह है कि हमें अपनी आजादी का ऐलान हथियारों की झंकार की लय पर करना होगा। अगर आप यहां हथियारों की लड़ाई नहीं लड़ना चाहते और सत्याग्रह-आन्दोलन भी नहीं चला सकते तो कम-से-कम अपमानजनक समझौते की कड़वी घूंट पीकर उन लोगों के माथे पर कलंक का टीका तो न लगाइये, जो अपने घर-बार से दूर निर्जन विदेशों में मातृभूमि की आजादी के लिए जान तोड़कर लड़ रहे हैं।

हमारे भारत के गुप्तचरों ने मुझे बताया कि कांग्रेस के नेता मुझसे (सुभाष बोस से) नाराज हैं। मैं उनकी नाराजगी को सम-

रहते हुए भी स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं समझौते का हमेशा विरोधी रहा हूं और रहूंगा। फिर कांग्रेस वर्किंग कमेटी की पीठ के पीछे 'अगस्त-प्रस्ताव' वापस लेने और अंग्रेजों से समझौता करने का कोई वैधानिक और नैतिक अधिकार भी नहीं है। मगर मैंने सुना है कि कुछ लोग मुझ पर यह आरोप लगा रहे हैं कि मैं जापानियों की सहायता ले रहा हूं।

इस सन्दर्भ में मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैंने जापान की सहायता ली है और मैं इसके लिए जरा भी लज्जित नहीं हूं। जापान ने हिन्दुस्तान की आजादी का ऐलान कर दिया है, उसने अस्थायी आजाद हिन्द सरकार को भी स्वीकार कर लिया है और इसी आधार पर हमने उससे समझौता किया है। मगर आप? आप तो उस (ब्रिटिश) सरकार से समझौता करने जा रहे हैं जो सदियों से आपका खून चूस रही है। फिर भी आप हमपर आरोप करते हैं! हां! अगर आप ब्रिटेन से इस शर्त पर समझौता करें कि वह आपको आजाद राष्ट्र का अधिकार दे दे तो बात दूसरी हो जायेगी।

यह ठीक है कि जापान ने हमें अंग्रेजों से युद्ध करने के लिए हथियार दिये हैं, मगर फिर भी वह एक आजाद मित्र-राष्ट्र की सहायता है। हमारी (आजाद हिन्द) सेना सर्वथा हमारी सेना है, इस सेना को भारतीय प्रशिक्षकों द्वारा राष्ट्र-भाषा में शिक्षा दी गई है।

हमारा स्वयं का सैनिक स्कूल है जिसमें भारतीय शिक्षक प्रशिक्षण देते हैं। हमारी सेना का झण्डा राष्ट्रीय झण्डा है। छोटे-से-छोटे सैनिक से लेकर ऊंचे से ऊंचा अफसर तक हिन्दुस्तान की आजादी का दीवाना है। आप हमारी सेना को 'कठपुतली सेना' कहने का साहस कैसे करते हैं? कठपुतली सेना तो सरकारी (ब्रिटिश) सेना है जो चांदी के टुकड़ों के लिए साम्राज्यवादी लड़ाई लड़ती है।

क्या मैं यह सोचूं कि (ब्रिटिश की) ढाई लाख सरकारी सेना

में कोई भी ऐसा भारतीय व्यक्ति नहीं जो जनरल बनाया जा सके ? दो महायुद्धों में क्या हिन्दुस्तानियों ने ही सबसे अधिक 'विक्टोरिया' तमगे नहीं जीते ? फिर भी 'कठपुतलियों' को जनरल का पद देने की 'मूर्खता' कौन कर सकता है ?

साथियो ! मैं अभी कह चुका हूं कि मैं जापानियों की सहायता लेने में कुछ भी गलत नहीं समझता। अगर अपने को सर्वशक्तिमान समझने वाली गोरी साम्राज्यशाही भी आज भीख की झोली लेकर दर-ब-दर ठोकरें खा सकती है और अमेरिका केसामने घुटने टेककर भीख मांग सकती है, तो हम तो आखिर एक पराधीन और पद-दलित राष्ट्र हैं, हमें अपने किसी भी मित्र की सहायता स्वीकार कर लेने में क्या गुनाह है ? आज हम जापान की मदद ले रहे हैं, हो सकता है कल हमें दूसरे लोगों की सहायता लेनी पडे। हमें भारत की मदद के लिए जिससे भी सहायता लेनी होगी हम कभी नहीं हिचकेंगे।

अगर बिना किसी बाहरी मदद के हम हिन्दुस्तान की आजादी जीत सक्ते तो मुझसे अधिक और कोई प्रसन्न न होता। किन्तु आज तक हमने इतिहास में ऐसा कोई स्वतन्त्रता का आन्दोलन नहीं पढ़ा जो बिना बाहरी मदद के सफल हुआ हो और पराधीन देशों के लिए यह ज्यादा प्रतिष्ठाजनक है कि वे अपने शासकों के शत्रुओं का साथ दें—बजाय इसके कि वे (अर्थात् कांग्रेसी नेता) अपने शासकों (अंग्रेजों) से समझौता करके घुटने टेक दें। हमारी सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि हमारे (कांग्रेस के) नेताओं ने हमें अपने शत्रु से नफरत करना नहीं सिखाया। यद्यपि वे हमें दूसरे देशों के दुश्मनों से नफरत करने का उपदेश देते रहे हैं। आश्चर्य है कि हमारे देश में कुछ नेता बाहरी 'फासिज्म' का विरोध करते हैं, दूसरी ओर वही परन्तु अपने देश के फासिस्ट शासक से हाथ मिलाने के लिए तैयार हैं।

साथियो ! मुझे कुछ भी कहने की जरूरत न होती परन्तु मैं और मेरे साथी तो यहां विदेश में आजादी या मौत की लड़ाई लड़ रहे हैं। हमारे बहादुर लड़ाकों को मोर्चे पर मौत से खेलना पड़ता है। हम जब बर्मा में थे तो मशीनगन और बम तो हमारे निकट रोज के तमाशे बन गये थे। मैंने अपनी आंखों से अपने साथियों को ब्रिटिश बमों से आहत होकर तड़प-तड़पकर मर जाते हुए देखा है। मैंने देखा है कि है यूनियन जैक वाले (ब्रिटिश) हवाई जहाजों ने आजाद हिन्द फौज के हमारे रंगून स्थित सम्पूर्ण अस्पताल को जान-बूझकर मशीनगनों और बमों से जमींदोज कर दिया है। उनके घाव मेरी पसलियों में चिपक गये हैं, उनकी आहें मेरे गले में रुंध गई है, उनका खून मेरी आंखों में उतर आया है।

अगर आज मैं और मेरे कुछ साथी अब भी जिन्दा हैं तो यह केवल ईश्वर की कृपा है। हमको आपसे बोलने और आपको बतला देने का पूरा-पूरा अधिकार है क्योंकिहम मौत की छाया में जिन्दा रहे हैं, और देश के शत्रुओं से लड़ते रहे हैं। आप, जो बड़े-बड़े बंगलों में रहते हैं, आपको नहीं मालूम कि बमबाजी का क्या असर होता है। आप नहीं जानते कि जिस समय आपके सिरों पर ब्रिटिश जहाज मंडरा रहे हों, आपकी इमारतें बमों से चूर-चूर हो रही हों, आपके हाथ-भर के फासले पर मशीनगन की सनसनाती हुई गोलियां उड़ रही हों, बच्चे मर रहे हों, औरतें अस्त-व्यस्त भाग रही हों, खून बह रहा हो, पसलियां टूट रही हों, मुर्दे सड़कों पर बिछ रहे हों, उस समय का अनुभव कितना गहरा होता है।

हमारे दिलों पर उन खूनी लकीरों के दाग पड़ गये हैं; किन्तु फिर भी हमने अपना सिर ऊंचा रक्खा है। हमसे फिर भी आप उम्मीद करते हैं कि हम समझौते की ओर नजर उठाकर भी देख सकेंगे ? नहीं, कभी नहीं, भारतीय खून इतना पतला नहीं होता।

साथियो ! फिर आज हमें सोचना है कि हम क्या करें ? अगर

'कांग्रेस वर्किंग कमेटी' समझौते के लिए तैयार हो जाती है तो आप अपना आन्दोलन जारी रखना है। आप कांग्रेस वर्किंग कमेटी को मजबूर कीजिए कि वे सभी राजनीतिक कैदियों के छुटकारे की मंजूरी के बिना समझौते का खयाल भी मन में न लायें। साथ ही आप इस बात का विरोध कीजिए कि भारतीय सिपाही पूर्वी एशिया में गाजर-मूली की तरह कटने के लिए क्यों भेजे जाएं? अगर इसमें आप सफल नहीं होते तो आपको सरकार का सक्रिय विरोध करना होगा। ब्रिटिश ने पिछले वर्षों में अपनी सेनाओं को ऐसे गुप्त आदेश दिए हैं कि उनपर चलकर ब्रिटिश सेना विदेशों में अपनी शक्ति बढ़ाए। आप (ब्रिटिश भारतीय सेना के सैनिक) उन आदेशों को अपने पक्ष में, अपने संगठन में प्रयुक्त कीजिए। भारतीय सेना अब पुरानी भारतीय सेना नहीं रही उसमें बहुत-से सचेत और देशभक्त सिपाही और अफसर हैं। जब सेना भंग कर दी जाएगी, उस समय विद्रोह की चेतना जागना स्वाभाविक है।

इस युद्ध को धन्यवाद है कि आज ढाई लाख भारतीय हथियार चलाना सीख गए। सेना के भंग होने के समय वे शस्त्रागारों को लूटकर ब्रिटिश शासकों पर हमला बोल सकते हैं।

मैं अधिक कुछ नहीं कहना चाहता, किन्तु आपको याद रखना होगा कि विद्रोही और क्रान्तिकारी वह है जो सत्य में विश्वास रखता है और यह विश्वास रखता है कि अन्त में सत्य और न्याय की ही विजय होती है। जो असफलताओं से, क्षणिक असत्यों से निराश हो जाता है, उसे अपने को क्रांतिकारी (विद्रोही) कहने का कोई हक नहीं। क्रांतिकारी (विद्रोही) का बाना है—आंखों में आशा के सपने, हाथों में मौत के फूल और दिल में आजादी का तूफान।

मुझे विश्वास है कि अगर हम अपने मोहरे ठीक चलाते गए तो इस युद्ध के अन्त में हमारी विजय होगी, अगर हम हार भी गए तो निराशा की जरूरत नहीं। हम युद्ध के बाद एक क्रांति करेंगे,

निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक 'नेताजी के विशेष पत्र' में दिए गए पत्र 'An Indian Pilgriam Correspondence (नेताजी रिसर्च ब्यूरो द्वारा प्रकाशित)' एवं 'राष्ट्रधर्म मासिक' के विभिन्न अंकों (नेताजी विशेषांक) क्रांतिकारी सुभाष, जयहिन्द, *Indian National* Congress 'नेताजी सुभाषचन्द्र बोस' आदि पुस्तकों एवं पत्रों से लिए गए हैं। मूल पत्रों को यथा आवश्यकता संक्षिप्त किया गया है तथा उनके भावानुवाद भी दिए गए हैं।

'सुभाष-गांधी पत्राचार' एवं 'सुभाष-जिन्ना पत्राचार' शीर्षक अंश संक्षिप्त रूप में 'Important Speeches and writing of Subhash Bose' नामक ग्रन्थ से रूपान्तरित किए गए हैं। संदर्भार्थ ३-४ पत्र-पत्रावली से उद्धृत किए गए हैं।

हम उपरोक्त ग्रन्थों एवं पत्र-पत्रिकाओं के लेखकों, संग्रहकर्ताओं, अनुवादकों, सम्पादकों तथा प्रकाशकों के हृदय से आभारी हैं। उनके गुरुतर प्रयत्नों के फलस्वरूप ही हमारा यह लघु प्रयास सम्भव हो सका है। उन्हें हमारा साधुवाद। हम रोम-रोम से उनके कृतज्ञ हैं।

राष्ट्रधर्म के सम्पादक श्रद्धेय पं० वचनेश त्रिपाठी एवं श्री प्रमोद त्रिपाठी दीपकर की कृपादृष्टि एवं सहयोग-प्रोत्साहन के लिए

अगर हम उसमें भी असफल रहे तो तीसरा महायुद्ध हमें फिर लड़ाई का सफल अवसर देगा।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि बीस साल के अन्दर अगला विश्व-युद्ध आ रहा है। भारत पूर्णरूपेण उसी युद्ध में आजाद होगा यह निश्चित है—और यह हमपर निर्भर करता है। हो सकता है अभी कुछ दिन और लगें किन्तु इसमें इतना निराश होने की क्या जरूरत है कि हमारे नेता 'वायसराय' भवन में घुटने टेकने को तैयार हो जाएं ? मेरे साथी विद्रोहियो ! तबतक अपना झण्डा ऊंचा रखो जबतक वह खुद 'वायसराय' भवन और दिल्ली के लालकिले पर न फहराने लगे।

इन्कलाब जिन्दाबाद ! आजाद हिंद जिन्दाबाद ! ! जयहिंद ! ! !

आपका

निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक 'नेताजी के विशेष पत्र' मे दिए गए पत्र 'An Indian Pilgriam Correspondence (नेताजी रिसर्च ब्यूरो द्वारा प्रकाशित)' एवं 'राष्ट्रधर्म मासिक' के विभिन्न अंकों (नेताजी विशेषांक) क्रांतिकारी सुभाष, जयहिन्द, Indian National Congress 'नेताजी सुभाषचन्द्र बोस' आदि पुस्तकों एवं पत्रो से लिए गए हैं। मूल पत्रों को यथा आवश्यकता संक्षिप्त किया गया है तथा उनके भावानुवाद भी किए गए हैं।

'सुभाष-गांधी पत्राचार' एवं 'सुभाष-जिन्ना पत्राचार' शीर्षक अंश संक्षिप्त रूप मे 'Important Speeches and writing of Subhash Bose' नामक ग्रन्थ से रूपान्तरित किए गए हैं। संदर्भार्थ ३-४ पत्र-पत्रावली से उद्धृत किए गए हैं।

हम उपरोक्त ग्रन्थों एवं पत्र-पत्रिकाओं के लेखको, संग्रहकर्ताओं, अनुवादकों, सम्पादकों तथा प्रकाशकों के हृदय से आभारी हैं। उनके गुरुतर प्रयत्नों के फलस्वरूप ही हमारा यह लघु प्रयास सम्भव हो सका है। उन्हें हमारा साधुवाद। हम रोम-रोम से उनके कृतज्ञ हैं।

राष्ट्रधर्म के सम्पादक श्रद्धेय पं० वचनेश त्रिपाठी एवं भाई प्रमोद त्रिपाठी दीपंकर की कृपादृष्टि एवं सहयोग-प्रोत्साहन के लिए

भी हम आभारी हैं।

प्रातःस्मरणीय नेताजी सुभाष चन्द्र बोस-सम्बन्धित यह लघु-पुस्तिका मेरी अंतसप्रेरणा का प्रसाद है। विश्वास है, जनता में इसका स्वागत होगा। जयहिन्द !

सादर-साभार
सम्पादक-संयोजक
शंकर सुलतानपुरी

⊙⊙